कमला नेहरू महिला महाविद्यालय ; भुबनेश्वर

हिंदी विभाग ; ई – पत्रिका

हिंदी भारती

मुंशी प्रेमचंद

विशेषांक

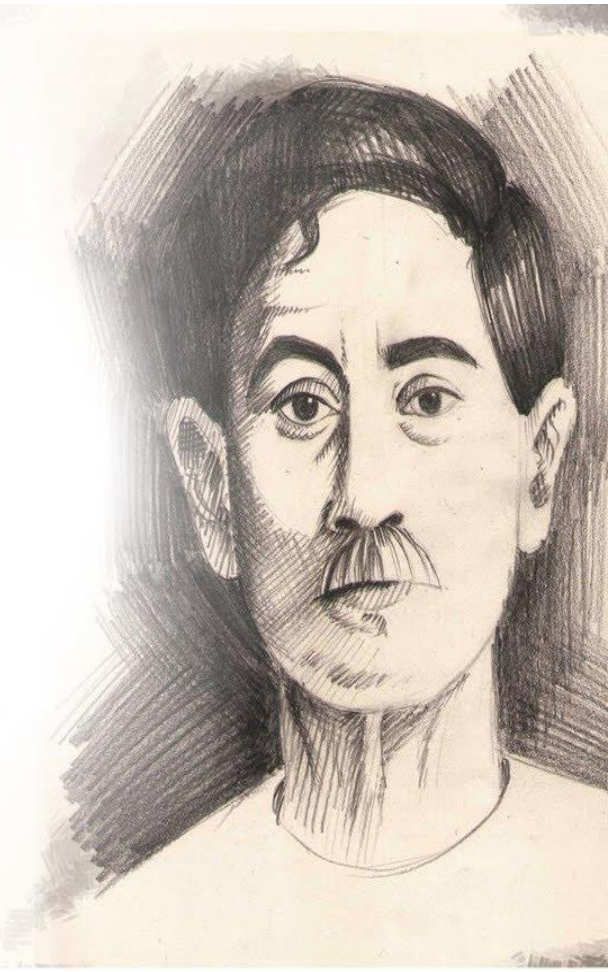

जुलाई - 2019

संपादक मंडली

संपादक : डॉ. वेदुला रामालक्ष्मी
डॉ. मनोरमा मिश्र

उप – संपादक : कु. हाफिज़ा बेगम
कु. बर्षा प्रियदर्शिनी

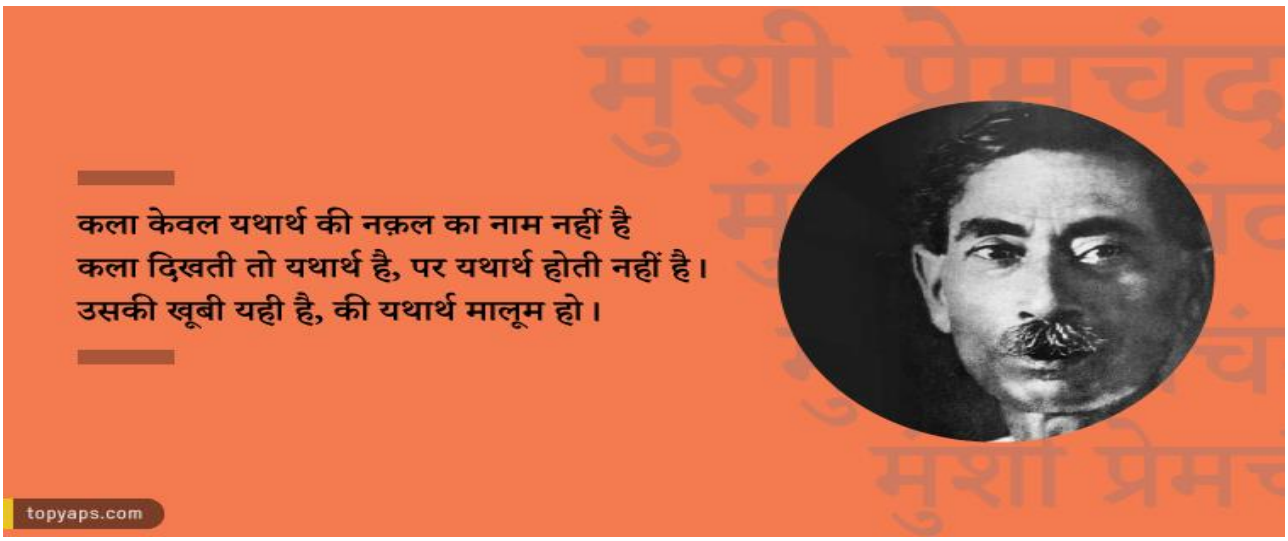

संपादकीय

"हिंदी भारती" के सभी पाठकों को "प्रेमचंद जयंती की हार्दिक शुभकामनायें"

कोई ऐसा हिंदी प्रेमी ना होगा जिसने प्रेमचंद की कोई कहानी ना पढ़ी हो। प्रेमचंद के कथा साहित्य का हर पात्र आज भी उतना ही प्रसंगिक है जितना उस काल में हुआ करता था। प्रेमचंद ने हिंदी कथा साहित्य को नई दिशा दी है और इसी वजह से उनका युग प्रेमचंद युग के नाम से जाना जाता है। उनकी रचनाओं का अनुवाद ना सिर्फ भारतीय भाषाओं में हुआ है, बल्कि विश्व साहित्य का भी हिस्सा है।

"हिंदी भारती" का जुलाई अंक कथा सम्राट मुंशी प्रेमचंद जी को समर्पित है। इस अंक में छात्राओं ने प्रेमचंद के उपन्यासों और कहानियों का अध्ययन कर उनका सम्यक विश्लेषण किया है।

हमारी ई - पत्रिका ने हमेशा प्रयास किया है कि छात्राओं को प्रोत्साहित करती रहे और उनमें छुपी सृजनात्मकता को तथा नेतृत्व तथा प्रबंधन को अवसर प्रदान करती रहे। "आपकी बात" हमारे लिये अखण्ड प्रेरणा का स्रोत है। कृपया अपनी बात हम तक पहुँचाते रहें। हम आशा करते हैं कि हर अंक की तरह आप इस अंक को भी स्वीकार करते हुए भविष्य में हमारा मार्गदर्शन करते रहेंगे और आपका आदर और स्नेह हमें इसी तरह मिलता रहेगा।

अब हमारी पत्रिका को आप हमारे महाविद्यालय के वेब साइट www.knwcbbsr.com पर भी पढ़ सकते हैं।

संपादक : डॉ. वेदुला रामालक्ष्मी

डॉ. मनोरमा मिश्र

अनुक्रमणिका

क्र सं.	शीर्षक	विधा	नाम	पृ.स .
1.	प्रेमचंद	लेख	संग्रहित	5
2.	प्रेमचंद आदर्शवादी थे या यथार्थवादी?	लेख	पिंकी सिंह	9
3.	कर्मभूमि की सुखदा	लेख	हाफिज़ा बेगम	11
4.	जालपा	लेख	हाफिज़ा बेगम	13
5.	घीसू	लेख	श्रद्धा सुमन	16
6.	सेवासदन	लेख	शाकंबरी	17
7.	पूस की रात का हल्कू	लेख	शरीफा शरवारी	19
8.	प्रेमचंद	कविता	संग्रहित	23
9.	प्रकृति	कविता	श्रद्धांजली	23
10.	आदर्श की कसौटी पर रमानाथ	लेख	सस्मिता	24
11.	कर्मभूमि उपन्यास में आदर्श नारी	लेख	स्वाति माधुरी	26
12.	नमक का दरोगा	लेख	सौदामिनी	27
13.	अमरकांत	लेख	प्रज्ञा दास	28
14.	मुंशी तोताराम	लेख	मामानी रेड्डी	30
15.	दलित जीवन की त्रासदी - ठाकुर का कुआँ	लेख	प्रियदर्शिनी	32
16.	एक कविता उनके सम्मान में	कविता	श्रद्धांजली	36
17.	कर्मभूमि के नारी पात्र	लेख	शुभश्री शताब्दी	38
18.	ईदगाह	कहानी का सारांश	कीर्तिपर्णा	41
19.	आपकी बात			42
20.	लमही एवं ठाकुर का कुआँ	यूट्यूब लिंक		43
21.	यादों के गलियारे से	चित्र स्मृतियाँ		

प्रेमचंद

प्रेमचंद (31 जुलाई 1880 – 8 अक्टूबर 1936) हिन्दी और उर्दू के महानतम भारतीय लेखकों में से एक थे। मूल नाम **धनपत राय श्रीवास्तव**, प्रेमचंद को **नवाब राय** और **मुंशी प्रेमचंद** के नाम से भी जाना जाता है। उपन्यास के क्षेत्र में उनके योगदान को देखकर बंगाल के विख्यात उपन्यासकार शरतचंद्र चट्टोपाध्याय ने उन्हें **उपन्यास सम्राट** कहकर संबोधित किया था। प्रेमचंद ने हिन्दी कहानी और उपन्यास की एक ऐसी परंपरा का विकास किया जिसने पूरी सदी के साहित्य का मार्गदर्शन किया। आगामी एक पूरी पीढ़ी को गहराई तक प्रभावित कर प्रेमचंद ने साहित्य की यथार्थवादी परंपरा की नींव रखी। उनका लेखन हिन्दी साहित्य की एक ऐसी विरासत है जिसके बिना हिन्दी के विकास का अध्ययन अधूरा होगा। वे एक संवेदनशील लेखक, सचेत नागरिक, कुशल वक्ता तथा सुधी (विद्वान) संपादक थे। बीसवीं शती के पूर्वार्द्ध में, जब हिन्दी में तकनीकी सुविधाओं का अभाव था,उनका योगदान अतुलनीय है। प्रेमचंद के बाद जिन लोगों ने साहित्य को सामाजिक सरोकारों और प्रगतिशील मूल्यों के साथ आगे बढ़ाने का काम किया, उनमें यशपाल से लेकर मुक्तिबोध तक शामिल हैं। उनके पुत्र हिन्दी के प्रसिद्ध साहित्यकार अमृतराय हैं जिन्होंने इन्हें कलम का सिपाही नाम दिया था।

जीवन परिचय

प्रेमचंद का जन्म 31 जुलाई 1880 को वाराणसी के निकट लमही गाँव में हुआ था। उनकी माता का नाम आनन्दी देवी था तथा पिता मुंशी अजायबराय लमही में डाकमुंशी थे। उनकी शिक्षा का आरंभ उर्दू, फारसी से हुआ और जीवनयापन का अध्यापन से पढ़ने का शौक उन्हें बचपन से ही लग गया। 13 साल की उम्र में ही उन्होंने *तिलिस्म-ए-होशरुबा* पढ़ लिया और उन्होंने उर्दू के मशहूर रचनाकार रतननाथ 'शरसार', मिर्ज़ा हादी रुस्वा और मौलाना शरर के उपन्यासों से परिचय प्राप्त कर लिया। 1898 में मैट्रिक की परीक्षा उत्तीर्ण करने के बाद वे एक स्थानीय विद्यालय में शिक्षक नियुक्त हो गए। नौकरी के साथ ही उन्होंने पढ़ाई जारी रखी।

1910 में उन्होंने अंग्रेजी, दर्शन, फारसी और इतिहास लेकर इंटर पास किया और 1919 में बी.ए. पास करने के बाद शिक्षा विभाग के इंस्पेक्टर पद पर नियुक्त हुए।
सात वर्ष की अवस्था में उनकी माता तथा चौदह वर्ष की अवस्था में पिता का देहान्त हो जाने के कारण उनका प्रारंभिक जीवन संघर्षमय रहा। उनका पहला विवाह उन दिनों की परंपरा के अनुसार पंद्रह साल की उम्र में हुआ जो सफल नहीं रहा। वे आर्य समाज से प्रभावित रहे, जो उस समय का बहुत बड़ा धार्मिक और सामाजिक आंदोलन था। उन्होंने विधवा-विवाह का समर्थन किया और 1906 में दूसरा विवाह अपनी प्रगतिशील परंपरा के अनुरूप बाल-विधवा शिवरानी देवी से किया। उनकी तीन संताने हुईं- श्रीपत राय, अमृत राय और कमला देवी श्रीवास्तव। 1910 में उनकी रचना सोजे-वतन (राष्ट्र का विलाप) के लिए हमीरपुर के जिला कलेक्टर ने तलब किया और उन पर जनता को भड़काने का आरोप लगाया। सोजे-वतन की सभी प्रतियाँ जब्त कर नष्ट कर दी गईं। कलेक्टर ने नवाबराय को हिदायत दी कि अब वे कुछ भी नहीं लिखेंगे, यदि लिखा तो जेल भेज दिया जाएगा। इस समय तक प्रेमचंद, धनपत राय नाम से लिखते थे। उर्दू में प्रकाशित होने वाली ज़माना पत्रिका के सम्पादक और उनके अजीज दोस्त मुंशी दयानारायण निगम ने उन्हें प्रेमचंद नाम से लिखने की सलाह दी। इसके बाद वे प्रेमचन्द के नाम से लिखने लगे। उन्होंने आरंभिक लेखन ज़माना पत्रिका में ही किया। जीवन के अंतिम दिनों में वे गंभीर रूप से बीमार पड़े। उनका उपन्यास मंगलसूत्र पूरा नहीं हो सका और लम्बी बीमारी के बाद 8 अक्टूबर 1936 को उनका निधन हो गया। उनका अंतिम उपन्यास *मंगल सूत्र* उनके पुत्र अमृत ने पूरा किया।

कार्य क्षेत्र

प्रेमचंद आधुनिक हिन्दी कहानी के पितामह और उपन्यास सम्राट माने जाते हैं। यों तो उनके साहित्यिक जीवन का आरंभ 1901 से हो चुका था पर उनकी पहली हिन्दी कहानी सरस्वती पत्रिका के दिसम्बर अंक में 1915 में सौत नाम से प्रकाशित हुई और 1936 में अंतिम कहानी कफन नाम से प्रकाशित हुई। बीस वर्षों की इस अवधि में उनकी कहानियों के अनेक रंग देखने को मिलते हैं। उनसे पहले हिंदी में काल्पनिक, एय्यारी और पौराणिक धार्मिक रचनाएं ही की जाती थी। प्रेमचंद ने हिंदी में यथार्थवाद की शुरूआत की। "भारतीय साहित्य का बहुत सा विमर्श जो बाद में प्रमुखता से उभरा चाहे वह दलित साहित्य हो या नारी साहित्य उसकी जड़ें कहीं गहरे प्रेमचंद के साहित्य में दिखाई देती हैं।" प्रेमचंद के लेख 'पहली रचना' के अनुसार उनकी पहली रचना अपने मामा पर लिखा व्यंग्य थी, जो अब अनुपलब्ध है। उनका पहला उपलब्ध लेखन उनका उर्दू उपन्यास 'असरारे मआबिद' है। प्रेमचंद का दूसरा उपन्यास 'हमखुर्मा व

हमसवाब' जिसका हिंदी रूपांतरण 'प्रेमा' नाम से 1907 में प्रकाशित हुआ। इसके बाद प्रेमचंद का पहला कहानी संग्रह *सोज़े-वतन* नाम से आया जो 1908में प्रकाशित हुआ। सोजे-वतन यानी देश का दर्द। देशभक्ति की भावना से ओतप्रोत होने के कारण इस पर अंग्रेज़ी सरकार ने रोक लगा दी और इसके लेखक को भविष्य में इस तरह का लेखन न करने की चेतावनी दी। इसके कारण उन्हें नाम बदलकर लिखना पड़ा। 'प्रेमचंद' नाम से उनकी पहली कहानी *बड़े घर की बेटी* ज़माना पत्रिका के दिसम्बर 1910 के अंक में प्रकाशित हुई। मरणोपरांत उनकी कहानियाँ मानसरोवर नाम से 8 खंडों में प्रकाशित हुई। कथा सम्राट प्रेमचन्द का कहना था कि
साहित्यकार देशभक्ति और राजनीति के पीछे चलने वाली सच्चाई नहीं बल्कि उसके आगे मशाल दिखाती हुई चलने वाली सच्चाई है। यह बात उनके साहित्य में उजागर हुई है। 1921 में उन्होंने महात्मा गांधी के आह्वान पर अपनी नौकरी छोड़ दी। कुछ महीने मर्यादा पत्रिका का संपादन भार संभाला, छह साल तक माधुरी नामक पत्रिका का संपादन किया, 1930 में बनारस से अपना मासिक पत्र हंस शुरू किया और 1932 के आरंभ में जागरण नामक एक साप्ताहिक और निकाला। उन्होंने लखनऊ में 1936 में अखिल भारतीय प्रगतिशील लेखक संघ के सम्मेलन की अध्यक्षता की। उन्होंने मोहन दयाराम भवनानी की अजंता सिनेटोन कंपनी में कहानी-लेखक की नौकरी भी की। 1934 में प्रदर्शित *मजदूर* नामक फिल्म की कथा लिखी और कंट्रेक्ट की साल भर की अवधि पूरी किये बिना ही दो महीने का वेतन छोड़कर बनारस भाग आये क्योंकि बंबई (आधुनिक मुंबई) का और उससे भी ज़्यादा वहाँ की फिल्मी दुनिया का हवा-पानी उन्हें रास नहीं आया। उन्होंने मूल रूप से हिंदी में 1915 से कहानियां लिखना और 1918 (सेवासदन) से उपन्यास लिखना शुरू किया। प्रेमचंद ने कुल करीब तीन सौ कहानियाँ, लगभग एक दर्जन उपन्यास और कई लेख लिखे। उन्होंने कुछ नाटक भी लिखे और कुछ अनुवाद कार्य भी किया। प्रेमचंद के कई साहित्यिक कृतियों का अंग्रेज़ी, रूसी, जर्मन सहित अनेक भाषाओं में अनुवाद हुआ। गोदान उनकी कालजयी रचना है। कफन उनकी अंतिम कहानी मानी जाती है। उन्होंने हिंदी और उर्दू में पूरे अधिकार से लिखा। उनकी अधिकांश रचनाएं मूल रूप से उर्दू में लिखी गई हैं लेकिन उनका प्रकाशन हिंदी में पहले हुआ। तैंतीस वर्षों के रचनात्मक जीवन में वे साहित्य की ऐसी विरासत सौंप गए जो गुणों की दृष्टि से अमूल्य है और आकार की दृष्टि से असीमीत।

कृतियाँ

प्रेमचन्द की रचना-दृष्टि विभिन्न साहित्य रूपों में प्रवृत्त हुई। बहुमुखी प्रतिभा संपन्न प्रेमचंद ने उपन्यास, कहानी, नाटक, समीक्षा, लेख, सम्पादकीय, संस्मरण आदि अनेक विधाओं में साहित्य की सृष्टि की। प्रमुखतया उनकी ख्याति कथाकार के तौर पर हुई और अपने जीवन काल

में ही वे 'उपन्यास सम्राट' की उपाधि से सम्मानित हुए। उन्होंने कुल 15 उपन्यास, 300 से कुछ अधिक कहानियाँ, 3 नाटक, 10 अनुवाद, 7 बाल-पुस्तकें तथा हजारों पृष्ठों के लेख, सम्पादकीय, भाषण, भूमिका, पत्र आदि की रचना की लेकिन जो यश और प्रतिष्ठा उन्हें उपन्यास और कहानियों से प्राप्त हुई, वह अन्य विधाओं से प्राप्त न हो सकी। यह स्थिति हिन्दी और उर्दू भाषा दोनों में समान रूप से दिखायी देती है।

- **उपन्यास** : गोदान, गबन, सेवा सदन, प्रतिज्ञा, प्रेमाश्रम, निर्मला, प्रेमा, कायाकल्प, रंगभूमि, कर्मभूमि, मनोरमा, वरदान, मंगलसूत्र (असमाप्त)
- **कहानी** : सोज़े वतन, मानसरोवर (आठ खंड), प्रेमचंद की असंकलित कहानियाँ, प्रेमचंद की शेष रचनाएँ
- **नाटक** : कर्बला, वरदान
- **बाल साहित्य** : रामकथा, कुत्ते की कहानी
- **विचार** : प्रेमचंद : विविध प्रसंग, प्रेमचंद के विचार (तीन खंडों में)
- **अनुवाद** : आजाद-कथा (उर्दू से, रतननाथ सरशार), पिता के पत्र पुत्री के नाम (अंग्रेजी से, जवाहरलाल नेहरू)
- **संपादन** : मर्यादा, माधुरी, हंस, जागरण

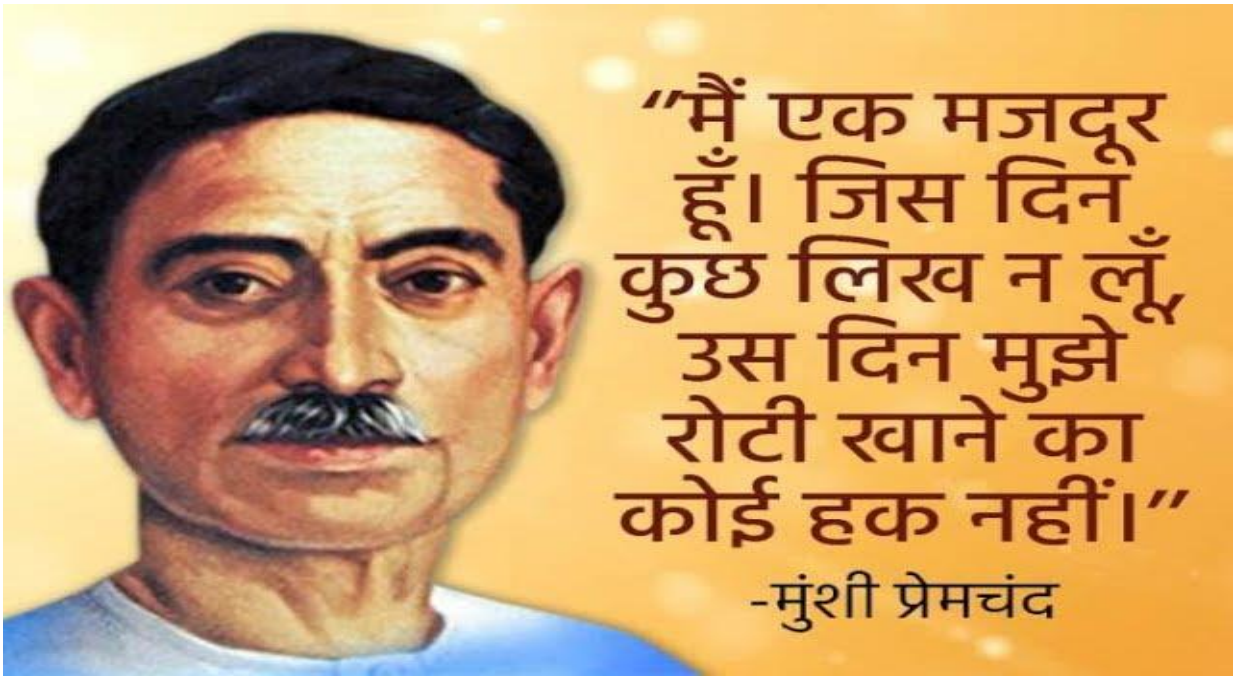

प्रेमचंद आदर्शवादी थे या यथार्थवादी?

प्रेमचंद आदर्शवादी थे या यथार्थवादी? इस विषय पर शुरू से ही विवाद रहा है। अनेक बार अनेक प्रकार से इस विषय पर चर्चा भी हो चुकी है। अब यह प्रश्न अकादमिक ही अधिक रह गया है। क्योंकि प्रेमचंद जी के उपन्यासों की सर्जन प्रक्रिया से यह प्रमाणित हो चुका है कि वे समय की नब्ज को पहचान कर उसके साथ साथ चलते रहे। अर्थात उनके अनुसार जीवन के ऊबड़ खाबड़ कठोर ओर यथार्थ धरातल पर चलते हुए भी व्यक्ति के मानस में जो ललक अंगड़ाइयां लेती रहती हैं वही उसका आदर्श भी हो सकता है। प्रेमचंद जी ने अपने कृतियाँ में कहीं पर आदर्श की स्थापना की है तो कहीं आदर्श का मुखौटा उतारकर यथार्थ पर दृष्टि केंद्रित किया है। पर उनकी प्रायः कृतियाँ आदर्शोन्मुख यथार्थवाद के धरातल पर स्थित है। खास तौर पर उनका सर्वश्रेष्ठ उपन्यास गोदान।

हिंदी उपन्यास साहित्य के क्षेत्र में सन् 1936 का वर्ष इस दृष्टि से महत्वपूर्ण है कि प्रेमचंद की महत्वपूर्ण सर्जना गोदान इसी वर्ष प्रकाशित हुआ था। तब तक प्रेमचंद की उपन्यास कला पूर्णतया प्रौढ़ता को प्राप्त कर चुकी थी। उनके विचारों में भी प्रौढ़ता एवं परिपक्वता आ चुकी थी। उनके सामने जीवन का कुरूप यथार्थ अत्यधिक स्पष्ट हो चुका था। अनेक प्रकार के संघर्षों के बाद वे जीवन के यथार्थ की धरातल पर अपने पांव दृढ़ता के साथ जमा चुके थे। मगर फिर भी उनकी इस उपन्यास में उपन्यास के नायक होरी के माध्यम से आदर्श की झांकी देखने को मिलती है। युग युगान्तर से चली आ रही किसानों की आर्थिक समस्या, बंधुआ मजदूरी, बेटियों के विवाह की चिंता, छुआ छूत, भेदभाव जैसे कड़े यथार्थ के बोझ तले दबा होरी अपने आदर्श को नहीं छोड़ता। भले ही उसकी पत्नी और बेटा इस सच्चाई से अवगत हो चुके थे और होरी को भी आदर्श से विमुख करने की सतत चेष्टा कर रहे थे। फिर भी उसने अपने आदर्श को जाने नहीं दिया बल्कि यथार्थ से लड़ते लड़ते उसने अपने प्राण त्याग दिये।

गोदान दयनीय एवं करुण स्थिति से लड़ रहे किसान की कथा है, जिसका नाम होरी है। होरी गाय पालने की इच्छा रखत है, किसी प्रकार बेचारा गाय प्राप्त भी कर लेता है। वह भी भोला का ब्याह करा देने का आश्वासन देकर। इस प्रकार होरी अपने द्वार पर गाय ले भी आता है, पर वही उसके आगामी समस्त आपदाओं का कारण बन जाता है। आपदाओं को सह कर भी वह गाय को रख नहीं पाता। इस गाय पालने की ललक में उसका सारा परिवार भी अस्तव्यस्त हो जाता है। वो क्रमशः विघटित होते हुए सुतली कातने और टोकरी ढ़ोने वाले मात्र एक मजदूर

बनकर रह जाता है। अंत में जब वो मृत्यु के सम्मुख होता है तो उस समय उसके पास गोदान के लिए न तो एक गाय थी, न बछिया और न ही पैसा।

कितनी बिडम्बना है कि अपनी अकांक्षा को पूरा करते करते उसके जीवन का पथ समाप्त हो जाता है और उसकी आशा आशा ही रह जाती है। कदाचित यह यथार्थ है। वह यथार्थ जिसे साधारण मनुष्य आसानी से ग्रहण नहीं कर पाता। इस यथार्थ को साथ लिए प्रमचंद ने पूरे कथानक की रचना कर डाली, एक आदर्श होरी के साथ। इसीलिए प्रेमचंद का यह कथानक भी आदर्शोन्मुख यथार्थवाद ही कहा जाएगा।

यहाँ उपन्यास केवल आदर्श या यथार्थ की नहीं बल्कि कहीं न कहीं उपन्यास में निहित चरित्र की भी है। हर एक चरित्र अपना एक अलग अस्तित्व लेकर चल रहा है। सकारात्मक चरित्र में होरी, धनिया, मेहता आदि हैं और नकारात्मक चरित्र में ठाकुर, जमींदार आदि। सब का अपना एक अलग महत्व दिखाई देता है। जिनका होना कथानक को कई रंगों से रंजीत भी करता है। जरूरी नहीं है कि इस चरित्र को समझने के लिए केवल उसके जैसी जीवनशैली को अपनाया जाए। कुछ बातें पढ़कर और देखकर भी समझी जा सकती हैं। अगर ऐसा नहीं होता तो गोदान एक सर्वश्रेष्ठ उपन्यास बनकर हमारे सामने प्रस्तुत ही नहीं होता। क्योंकि इसमें ज़्यादातर किसानों की समस्याओं को दिखया गया है। और भारत के किसानों की आर्थिक स्थिति इतनी अच्छी नहीं है कि वे किसी किताब को खरीद सके या उसको पढ़ कर यथाचित्त नाम प्रदान कर सकें। ये तो उन साहित्य अनुभव का कथन है जिन्होंने गोदान को 'कृषक जीवन का महाकाव्य' कहा है। ये एक महत्वपूर्ण बात है कि प्रेमचंद अपने चरित्रों को उनकी संपूर्णता के साथ प्रस्तुत करते हैं। फलतः चरित्र की विशेषता और उसके व्यक्तित्व को समझना आसान हो जाता है। गोदान इसके एक सर्वश्रेष्ठ प्रमाण के रूप में हमारे सामने प्रस्तुत होता है।

पिंकी सिंह, भूतपूर्व छात्रा

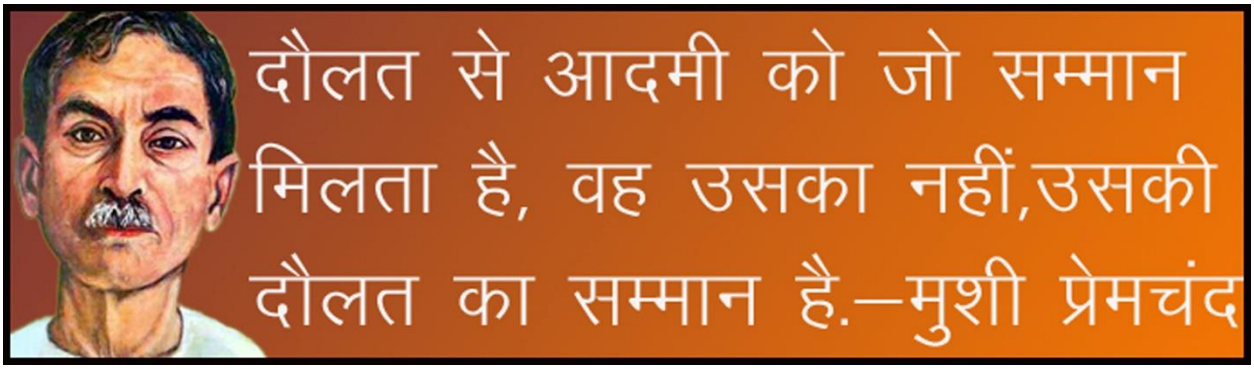

कर्मभूमि की सुखदा

सुखदा धनवान माता पिता की इकलौती पुत्री है। उसकी मां रेणुका देवी और पति अमरकान्त है। उसके ऐश्वर्य और भोग की प्रवृत्ति का अमरकान्त की त्याग प्रवृत्ति से समझौता नहीं हो पाता और वह उससे खिंचती चली जाती है। परन्तु अमरकान्त के घर से चले जाने पर उसके यथार्थ चरित्र का विकास आदर्श की ओर क्रमशः होता है। वह अछूतों के मन्दिर में प्रवेश के आन्दोलन में सफलता प्राप्त कर लोकप्रिय बन जाती है। इसके बाद गरीबों के लिए भूमि - अर्जन हेतु आन्दोलन और हड़ताल का आयोजन करने के कारण जेल भी जाती है। जेल में वह साधारण कैदियों के साथ ही रहना पसन्द करती है, इस प्रकार यथार्थ से क्रमशः आगे बढ़ता हुआ आदर्श के चर्मोत्कर्ष पर पहुंचकर उसका चरित्र सर्वाधिक आकर्षक बन जाता है।

सुखदा कथानक के नायक अमरकान्त की पत्नी है। प्रारंभ में प्रवृत्ति की भिन्नता के कारण उसके और पति के बीच में विरोध की खाई अवश्य कुद जाती है, परंतु धीरे -धीरे अमरकान्त आदर्श की और बढ़ता है और अमरकान्त की कर्मभूमि में कूदकर सुखदा उससे भी आगे निकल जाती है। वह हड़ताल और आंदोलन में जेल जाती है। अन्त में उद्देश्य की सफलता के साथ अमरकान्त से उसका मिलन होता है। प्रारम्भ से लेकर अन्त तक प्रत्येक पात्र और प्रत्येक घटना उनसे प्रभावित रहती है। अतः वह कथानक की नायिका है।

'कर्मभूमि' में प्रेमचंद ने अन्य उपन्यासों की तरह सात्विक, तेजस्विता और कर्तव्यपरायणता जैसे आदर्शवादिता के आधार पर सुखदा के चरित्र की उदभावना की है। उसका चरित्र सामान्य धरातल से उठकर आदर्शवादिता के उच्च धरातल की और बढ़ता जाता है। सुखदा भारतीय नारी के आदर्श की प्रतिष्ठा करती है। वह भोग - विलास का परित्याग कर कठोर एवं तपस्यापूर्ण जीवन अपनाती है और अपने त्याग एवं कर्तव्य - परायणता से अपने पति अमरकान्त के हृदय को जीत लेती है।

बड़े घर की बेटी होने के कारण सुखदा में भोग और ऐश्वर्य की प्रवृत्ति के कारण अमरकान्त से खिंचती अवश्य है, परंतु उसमें अमरकान्त की परिश्रमशीलता और सेवावृत्ति के अंकुर हैं। यही कारण है वह केस में फँसी मुन्नी का बचाव करती है। अमरकांत के घर छोड़ देने पर वह भी साथ ही जाती है। अपने स्वाभिमान के कारण सुखदा न तो मायके जाती है और न उसकी कोई सहायता लेती है। यह जीविका के लिए एक कन्या पाठशाला में पचास रुपया माह कि नौकरी कर लेती है।

सुखदा स्वार्थिनी नहीं है, स्वाभिमान और परिश्रमशीलता के साथ अपनों के साथ आत्मीयता और प्रेम का व्यवहार उसके चारित्र की प्रमुख विशेषता है। ससुर समरकान्त की बीमारी की खबर सुनकर वह बैचेन हो जाती है। वह अपने व्यस्त कार्यक्रम में भी प्रतिदिन समय निकालकर उनको खाना बनाकर खिला आती, अपनी ननद नैना से वह असीम प्यार करती है। अमरकान्त के घर छोड़ने पर नौकरानी सिल्लो और नैना उसके साथ आती हैं। आगे चलकर नैना उसकी तैयार की हुई कर्मभूमि में कूद कर अपना बलिदान देती है।

सुखदा में नारी गर्व की सहज भावना है। वह अमरकान्त के घर न चले जाने पर उसकी परवाह नहीं करती, क्योंकि उन्होंने उसकी अपेक्षा की थी। सकीना के प्रति अमरकान्त का प्रेम भी उसे कठोर बना देता है। ऐसी ही शंका वह अमरकान्त और मुन्नी के संबंध में करती है। परंतु सकीना और मुन्नी से यर्थाथ स्थिति मालूम हो जाने पर ग्लानि होती है और वह अमरकान्त की कर्मभूमि को अपनाने का संकल्प कर लेती है।

अमरकान्त की त्यागमयी कर्मभूमि को अपना कर सुखदा के चरित्र में नाटकीय परिवर्तन आता है। वह अछूतों को अपने आंदोलन से मन्दिर में प्रवेश दिलाती है। यहीं से वह नेता बन जाती है। उसका दूसरा कदम गरीबों के मकानों की जमीन के लिए मुनिसिपालिटी से होता है। आन्दोलन और हड़ताल कराने के जुर्म में उसे गिरफ्तार कर लिया जाता है। लाला समरकान्त के लाख प्रयत्न करने पर भी वह जमानत पर छूटने को तैयार नहीं होती और जेल चली जाती है। जेल में भी साधारण कैदियों के साथ ही रहना पसंद करती है और विशेष सुविधाओं को ठुकरा देती है। उसका आंदोलन सफल होता है। हर्षोल्लास के वातावरण में उसका अमरकान्त से मिलन होता है।

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि सुखदा एक संघर्षमयी भारतीय नारी का आदर्श चित्र उपस्थित करती है। वह यथार्थ की भूमि से उठकर क्रमशः आगे बढ़ती हुई आदर्श के शिखर पर पहुंच जाती है। यही भारतीय नारी का उच्चतम आदर्श है। जिसके लिए प्रसाद जी ने लिखा है -

"नारी तुम केवल श्रद्धा हो ।
विश्व रजत नग पग तल में ।
पीयूष -स्रोत सी बहा करो ।
जीवन के सुंदर समतल में ।"

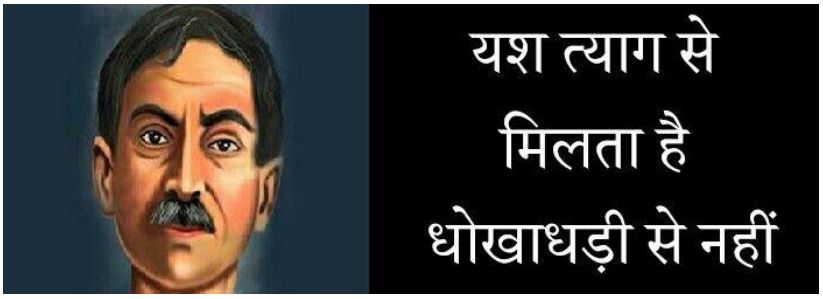

हाफीजा बेगम, +3 तृतीय वर्ष

जालपा

जालपा दीनदयाल की इकलौती पुत्री है और मुंशी दयानाथ की पुत्रवधू और उपन्यास के नायक रमानाथ की पत्नी है। बचपन से ही वह बड़े लाड़ प्यार से पली। पिता और माता उसकी सभी इच्छायें पूर्ण करते थे। उपन्यास के प्रारंभ में वह एक आभूषण प्रिय युवती के रूप में सामने आती है। शादी के बाद भी वह उसी रूप में नज़र में आती है। परंतु उसका चरित्र बदल जाता है। आभूषण प्रियता के स्थान पर उसमें देश-प्रेम की भावना, त्याग और सेवा की भावना जागृत होती है। सिर्फ इतना ही नहीं एक भारतीय नारी के मंगलमय रूप में वह हमारे सामने उपस्थित होती है। उसका चरित्र मुंशी प्रेमचन्द जी ने मनोवैज्ञानिक ढंग से हमारे सामने प्रस्तुत किया है।

जालपा एक साधारण ग्रामीण बालिका होते हुए भी उसका रूप - रंग अनुपम है। इसीलिए रमानाथ उसे पहली बार देखते ही उस पर मुग्ध हो जाता है। अपने अनुपम सौन्दर्य के कारण ही वह शादी के बाद ससुराल के पास - पड़ोसन की नवयुवतियों में लोकप्रिय हो जाती है। जालपा को पाने के बाद रमानाथ अपने भाग्य को सरहाने लगता है।

जालपा का बचपन आभूषण मण्डित संसार में बीता। इसके लिए उसके पिता-माता ही उत्तरदायी हैं। पिताजी जब भी बाहर जाते तो उसके लिए कोई न कोई आभूषण लाते, वे खिलौनों को पैसों की बर्बादी समझ्ते थे। गुड़िया और खिलौनों के स्थान पर वह आभूषणों से खेलकर बड़ी हुई। बड़े होने के बाद माँ के चन्द्रहार को देखकर वह उसके लिए हठ करती है। माँ उसे यह कहकर सांत्वना देती थी कि "तेरे लिए चन्द्रहार ससुराल से आएगा।" जब ससुराल से भी चन्द्रहार नहीं आया तो उसने एक भी गहना पहना नहीं। यह देखकर रमा उसे चन्द्रहार ले आने का वादा करता है। रमा ने उसके सामने बड़ी बड़ी डींगें हाँकी थी कि उसकी तनख्वाह मासिक चालीस रुपये है। वह सोचती थी कि इनके पास पैसे हैं मगर उसकी इच्छा को वे लोग पूरी नहीं करना चाहते हैं। जब उसके आभूशणों की पेटी चोरी हो जाती है तब वह चिंता के मारे बिस्तर पकड़ लेती है।

जालपा बचपन से ही विलासी थी। इसलिए मायके में रहते समय वह अपने हाथों से कुछ काम नहीं करती थी। यहां तक कि रसोई बनाना, घर की साफ सफाई करना आदि कुछ भी काम नहीं सीखा था। विवाह के बाद ससुराल में वह घर के कामों के प्रति उदासीन रहती है। लेकिन रामनाथ के घर छोड़ के चले जाने के बाद उसके जीवन में परिवर्तन आता है।

जालपा में आत्मा सम्मान और आत्मगौरव की भावना पर्याप्त मात्र में है। चंद्रहार ना मिलने पर उसकी व्याकुलता को देखकर उसकी माँ ने जब पार्सल से चन्द्रहार भेज दिया तो उसने उसे ग्रहण न करते हुए कहा कि "दान भिखारियों को दिया जाता है। मैं किसी का न लूँगी, चाहे वो माता का ही क्यों न हो।" उसका आत्मसम्मान उसे माता के सामने भी हाथ फैलाने से इनकार करता है। वह पास-पड़ोस में अथवा मुहल्ले में इसलिए नहीं जाती थी क्योंकि उसके पास अच्छे कपड़े और आभूषण नहीं है। ये दोनों वस्तुएं मिलते ही वो बाहर घूमने फिरने लगती है और मुहल्ले की युवतियां की नेता बन जाती है। जब उसे पता चलता है कि रमानाथ से गबन हो गया है और इसी वजह से वह घर छोड़ कर भाग गया है, तो वह तुरंत अपने सारे गहने बेच कर दफ्तर में पैसे चुका देती है। कलकत्ता में झूठी गवाही देने को तैयार अपने पति को खरीखोटी सुनाती है और अपने पति के पापों का प्रायश्चित करती है, जिससे रमानाथ का हृदय परिवर्तन हो जात है तथा इस तरह वह अपने पति को बचा लेती है। उसका पति रामनाथ जब आभूषण खरीदने की बात करता है तो उसका आत्मा गौरव जाग उठता है और वह कहती है, "मैं वेश्या नहीं हूँ कि तुम्हें नोच कर अपनी इच्छा पूरी करूं। मुझे तुम्हारे साथ जीना -मरना है, यदि मुझे सारी उम्र बिना गहनों में रहना पड़े, तो भी मैं कर्ज़ लेने को नहीं कहूंगी।

रमानाथ घर से भाग जाने के पश्चात उसकी बृद्धि जाग्रत होती है, अपना हार बेचकर पति के दफ्तर में जमा कर देती है। अपने कंगन बेचकर सराफों का ऋण चुका देती है। विलासिता की सारी सामग्री को गंगा में बहा देती है। सेवा, त्याग, करुणा और सहानुभूति की भावनाओं के साथ अपने कर्तव्य पथ पर आगे बढ़ती है। जालपा की कुशाग्र बृद्धि का परिचय पाठकों को तब मिलता है जब वह अपनी सखी रतन को सारी बातें बतलाकर उसके सलाह एवं सहयोग से शतरंज का नक्शा एक समाचारपत्र में छपवाकर कलकते में रमा की उपस्थिति एवं उसके ठिकाने का पता लगा लेती है। अपनी कुशाग्र, बृद्धि के सहारे वह कलकत्ता जाती है और अखबार के दफ्तर की सहायता का देवीदीन के मकान का पता लगाकर वहां पहुंच जाती है।

जालपा अद्भुत साहसी है। वह प्रयाग से केवल अपने छोटे देवर को लेकर कलकता पहुंच जाती है, वह कलकता में अकेली रहती है। वह रमा के पास पत्र भेजती है। रमा जालपा से मिलने देवीदीन के घर पर आता है। रमा जालपा को खुश करने के लिये उस्के पास गहनों की सौगात लेकेर आता है, पर जालपा रमानाथ को धिक्कारते हुए उन गहनों का तिरस्कार कर देती है, क्योंकि वो गहने रमानाथ को क्रांतिकारियों के विरुद्ध झूठी गवाही देने के लिये पुलिस देती है। जब रमा की गवाही से क्रांतिकारियों को फाँसी की सज़ा सुना दी जाती है तब जालपा यह सहन नहीं कर पाती है और उन क्रांतिकारियों के परिवारों की सहायता करने का प्रण कर अपने पति

के पाप का आंशिक प्रायश्चित करना चाहती है। वह देवीदीन का घर छोड़कर दिनेश के घर रहते हुये उस परिवार की सेवा में लग जाती है। उनके लिये चंदा इकठ्ठा करती है, उंके लिये पानी लाती है, भोजन बनती है। जालपा के इस त्याग और साहस के प्रबल प्रवाह में रमानाथ की निर्बलता बह जाती है। वह पुलिस के चंगुल से भाग जाता है और जज के पास जाकर असलियत बतला देता है। परिणाम स्वरूप जज अपना निर्णय बदल देता है, जिससे क्रांतिकारी छूट जाते हैं और उन्हें मामूली सजा सुनाई जाती है। इस प्रकार जालपा के चरित्र से हमें अद्भुत साहसिकता का परिचय मिलता है।

जालपा के चरित्र से हमें आदर्श पत्नी और भारतीय नारी का मंगलमय रूप दृष्टिगोचर होते हैं। उदाहरण स्वरूप अपने पति की नौकरी लगते ही वह मुहल्ले की स्त्रियों से मिलते जुलते लगती है। पति के चले जाने पर वह आदर्श पत्नी के रूप में पति को ढूढ़ने का प्रयास करती है। पति को बचाने के लिए अपने सारे आभूषण बेचकर गबन के रुपये जमा कर देती है। दिनेश के परिवार के लिए चन्दा इकठ्ठा करती है। इस प्रकार जालपा एक आदर्श पत्नी और भारतीय नारी का मंगलमय रूप है।

जालपा एक नारी होते हुए भी उसका दृष्टिकोण उदार है । वह जाती पांति के भेदभाव में विश्वास नहीं रखती है। देविहीन के घर पर पुत्रवधु की तरह रहती है और उनके घर का सारा काम करती है। उसका उत्तरार्द्ध जीवन मेहनत और परिश्रम से बीतता है। उपन्यास के सभी पात्र अन्त में उसका गुणगान करते हैं। रामनाथ कहता है - "जालपा के त्याग, निष्ठा और सत्यप्रेम में मेरी आँखें खोल दी।" रामेशबाबू के विचार में - "जालपा अपने बृद्धि - कौशल से पुरुषों के भी कान काटनेवाली है। वास्तव में वह उदार दृष्टिकोण वाली आदर्श नारी है।

डॉक्टर राम विलास शर्मा जी जालपा में उठते हुए भारतीय नारीत्व की छाया देखते हुए कहते हैं कि -"भविष्य के तुफानों की अग्रसूचना है। उसने वर्तमान की राह पर मजबूती से पाँव रखा है। वह एक नई आग है जो संस्कृति को पहचनेवाली नई शूरता है। जिसके आगे कोई बाधा नहीं ठहर सकती है। वह हिन्दुस्तान के नये आनेवाली इतिहास की भूमिका है। लेखक ने उसे देवता बनाने का प्रयास नहीं किया हैं। क्योंकि अनेक गुणों के साथ उसमें दोष भी है। ऊपर से फूल होते हुए भी भीतर से पत्थर है।"

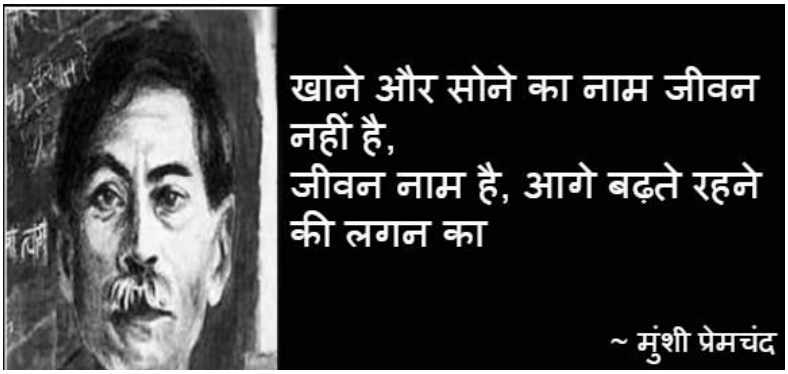

हाफीजा बेगम, +3 तृतीय वर्ष

घीसू

प्रेमचंद के अन्य सभी नायकों से घीसू का चरित्र बिल्कुल भिन्न है। यदि सामाजिक परिस्थितियों पर विचार किया जाए तो लेखक सामान्य सिद्धांत के अनुसार वह सकरात्मक नायक है, परन्तु वह वैसा सकरात्मक नायक नहीं है, जैसे पहले की काहानीयों में दिखते है। अपने पहले नियमों के विपरीत इस कहानी में लेखक चरित्र मे सकरात्मक आचरण आरोपित नहीं करते और उनकी आंतरिक निष्लंकता को रेखांकित करते हैं कि वे वैसे मानव के आदर्श रूप नहीं है, जैसे प्रेमचंद के अन्य सकरात्मक नायक थे।

घीसू एक चालक तथा समाज के परिस्थितियों से अनुभवि व्यक्ति था, जिसकी आयु 60 वर्षों की थी। घीसू के परिवार में उसके बेटे माधव और बहू बुधिआ के अलावा कोई और नहीं था। उनके पास न कुछ खाने का था न कुछ ढ़ंग से पहनने को था। कुछ टूटे फूटे मिट्टी के बर्तन ही उनकी संपत्ति थी। उसके वाबजूद भी घीसू और उसका बेटा आलसी थे। वे उससे अधिक काम नहीं करते जितना जीने केलिए जरूरी था। घीसू समाज मे लांछित, कामचोर, कर्जदार आदि बहुत सारे विशेषणों से भूषित व्यक्ति था, फिरभी वह सांसारिक चिंताओं से मुक्त था। काम करने की बजाय किसी के खेत से फसल चुरा लेना उन्हें अधिक पसंद था। कभी किसी के खेत से ईख तो कभी आलू और तो कभी मूँगफली चुरा लाते। जब उसकी बहू तथा बुधिआ की प्रसब वेदना से मौत होगयी, तो घिसु और माधव कफ़न केलिए रूपये मांगने जमींदार के पास जाता है और दिल खोलकर उनकी चापलूसी भी करते हैं। जब जमींदार उनकी हालात देखकर उनको पैसें देते हैं, वे दोनों उस पैसे से शराब पीते हैं। जब बेटा पूछता है कि अब हम कफ़न कैसे खरीदेंगे तो वह कहता है कि तुम चिंता मत करो, जिन लोगों ने हमें पहले कफ़न के लिये खरीद पैसे दिये थे वे खुद कफ़न लाके देंगे। बहू की लास पड़ी नहीं रह जाएगी।

वास्तव में हम घीसू और माधव को अच्छे या बुरे पात्रों की श्रेणी में नहीं रख सकते हैं। दोनों पात्र दरसल परिस्थितियों के फेर में पड़े हुए पात्र हैं। परिस्थितियों का प्रवाह जहाँ ले जाता है, वे उस ओर चले जाते हैं। दोनों के मन में समाज के प्रति तीव्र विद्वेष और आक्रोश है। इसी वजह से दोनों बेपरवाह ही नहीं लापरवाह भी हो जाते हैं।

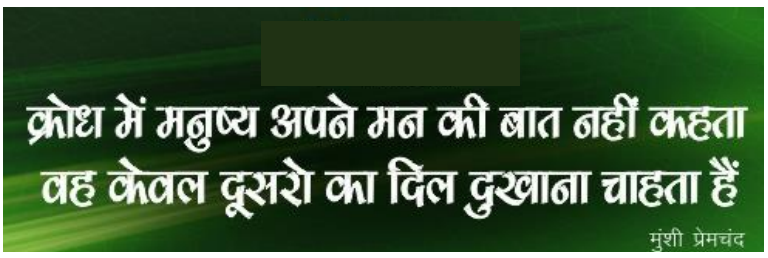

श्रद्धा सुमन, +3 द्वितीय वर्ष

सेवासदन

सेवासदन प्रेमचंद द्वारा रचित उपन्यास है। प्रेमचंद ने सेवासदन उपन्यास सन् 1916 में उर्दू भाषा में लिखा था। बाद में सन् 1919 में उन्होंने इसका हिंदी अनुवाद सवयं किया। उर्दू में यह बाज़ारे - हुस्न नाम से लिखा गया था।

नारी जाति की परवशता, निस्सहाय अवस्था आर्थिक एवं शैक्षिक परतंत्रता, अर्थात नारी दुर्दशा पर आज के हिंदी साहित्य में जितनी मुखर चर्चा हो रही है, बीसवीं सदी के प्रारंभिक चरण में, कथासम्राट प्रेमचंद (1880-1936) के उपन्यासों में इसका स्वर कहीं ज्यादा मुखर था। नारी जीवन की समस्याओं के साथ-साथ समाज के धर्माचार्यों, मठाधीशों, धनपतियों, सुधारकों के आडंबर, दंभ, ढोंग, पाखंड, चरित्रहीनता, दहेजप्रथा, बेमेल विवाह, पुलिस की घूसखोरी, वेश्यागमन, मनुष्य के दोहरे चरित्र, साम्प्रदायिक द्वेष आदि सामाजिक विकृतियों के घृणित विवरणों से भरा उपन्यास सेवासदन (1916) आज भी समकालीन और प्रासंगिक बना हुआ है। इन तमाम विकृतियों के साथ-साथ ये उपन्यास घनघोर दानवता के बीच कहीं मानवता का अनुसंधान करता है। अतिरिक्त सुखभोग की उपेक्षा में अपना सर्वस्व गवाँ देने के बाद जब कथानायिका को सामाजिक गुणसूत्रों की समझ हो जाती है तब वह किसी तरह दुनिया के प्रति उदार हो जाती है और उसका पति साधु बनकर अपने द्वारा किये गये दुष्कर्मो का प्रायश्चित करने लगता है। जमींदारी अहंकार में डूबे दंपती अपने तीसरी पीढ़ी की संतान के जन्म से प्रसन्न होते हैं, और अपनी सारि कटुता को भूल जाते हैं। ये सारी स्तिथियाँ उपन्यास की कथाभूमि में इस तरह पिरोई हुई है कि तत्कालीन समाज की सभी अच्छाइयों बुराइयों का जीवंत चित्र सामने आ जाता है। हर दृष्टि से यह उपन्यास एक धरोहर है।

कथावस्तु:

उपन्यास की नायिका, सुमन का विवाह एक गरीब ब्यक्ति से होता है, जी अच्छे वस्त्र और सुविधा - सम्पन्न जीवन एवं उसकी स्वाभाविक इच्छा को पूरा नहीं कर पाता। उसका पिता ईमानदार पुलिस अफसर है, जिसकी वजह से उसके सहयोगी और अधीनस्थ कर्मचारी उससे रुष्ट हैं, क्योंकि घूसखोरी आदि कुप्रथाओं का वह विरोध करता है और इस प्रकार उनके पथ का कंटक है। उसे अपनी पुत्री का विवाह करना है, इसलिए वह पथभ्रष्ट हो जात है। उसकी गिरफ्तारी होती है और उसे जेल की सजा हो जाती है।

एक दिन रात को सखी घर से लौटने में सुमन को देर हो जाती है। असन्तोष ओर खीज से त्रस्त उसका पति रात में उसे घर से बाहर निकाल देता है। वह अपनी सखी के घर जाने का

प्रयत्न करती है, परन्तु असफल रहती है। अन्त में, उसके पड़ोस में रहने वाली एक वेश्या उसे शरण देती है, और सुमन साध्वी नारी के पद से गिर कर वेश्या बन जाती है। इस प्रकार सेवासदन उस महिला की कहानी है जिसे हालात ने वेश्या बना दिया। समाज मे व्याप्त वेश्या समस्या का इसमें विस्तार से चित्रण हुआ है। यह उपन्यास केवल वेश्या समस्या का ताना-बाना नहीं है बल्कि भारतीय नारी की विवश स्तिथि ओर उसके गुलाम जीवन की नियति को भी बड़े ही मार्मिक ढंग से रेखांकित करने वाली कृति है। प्रेमचंद का सेवासदन एक ऐसा उपन्यास है जिसने उन्हें हिन्दी उपन्यासकार के रूप में प्रतिष्ठित किया और समूचे उपन्यास साहित्य को नई दिशा दी।

शाकंबरी, +3 द्वितीय वर्ष

पूस की रात का हल्कू

प्रेमचंद की कहानी पूस की रात अत्यधिक मार्मिक कहानी है। इसमें तीन ही पात्र हैं - हल्कू, हल्कू की पत्नी मुन्नी और हल्कू का कुत्ता जबरा। मुन्नी इस कहानी के आदि और अन्त में थोड़ी देर के लिए आती हैं। जबरा अधिकांश समय तक हल्कू के साथ रहता है, पर वह बोल नहीं सकता। पूरी कहानी में एक गरीब किसान की विवशता का चित्रण है। गरीब किसान हल्कू अपनी कड़ी मेहनत से कुछ पैसे जमा करता है जिससे वह ठण्ड के लिए एक कम्बल खरीद सके। पर साहूकार सहना आकर उससे वह पैसे ले लेता है।

प्रेमचंद ने उसके शरीर के विषय में लिखा है, "हल्कू का शरीर उसके नाम के अनुसार नहीं था। हल्कू नाम था उसका, जिसका अर्थ है - हल्का, कम वजन वाला, दुबला-पतला, पर हल्कू मोटा - ताजा था, नाम के विपरीत कद-काठी वाला।"
साहुकार सहना से भयभीत हल्कू एक गरीब किसान है। उसकी छोटी सी जमीन है, जिस पर वह खेती करता है। खेत में इतनी भी फसल नहीं होती थी जिससे साहूकार का कर्जा चुकाया जा सके। कर्जा चुकाना तो दुर रहा, वह जानता था कि सहना अनेक प्रकार से उसे डरायेगा, घुड़कियां देगा और गालियां सुनायेगा। इस कारण कर्जे के तीन रुपए दे देने में ही कुशल समझता है।

पति-पत्नी के मध्य होने वाले संवाद और गतिविधि से हल्कू का दब्बू और सरल स्वभाव समझ में आ जाता है -

हल्कू ने आकर स्त्री से कहा - "सहना आया है। लाओ, जो रूपये रखें है, उसे दे दूं, किसी तरह जान छूटे।"

स्त्री झाड़ू लगा रही थी। पिछे फिरकर बोली - "तीन ही तो रूपये है, दे दोगे तो कम्बल कहा से आएगा? माघ पूस की रात इस हाल में कैसे कटेगी ? उससे कह दो, फसल पर दे देंगे, अभी नहीं।"

हल्कू जानता था कि सहना मानेगा नहीं बहुत घूड़कियां देगा, गालियां देगा। वह अपनी पत्नी के पास गया और उसकी खुशामद करता हुआ बोला - "ला, दे दे, गला तो छूटे। कम्बल के लिए कोई दुसरा उपाय सोचूंगा।"

मुन्नी आंखें तोरती हुई बोली - "कर चुके दुसरा उपाय। जरा सुनूं तो कौन-सा उपाय करोगे? कोई खैरात में दे देगा कम्बल ? न जाने कितनी बाकी है जो किसी तरह चुकने ही नहीं आती। में कहती हूं, तुम क्यों नहीं खेत छोड़ देते? मर- मरकर काम करो, उपज हो तो बाकी दे दो। चलो छुट्टी हुई, बाकी चुकाने के लिए तो हमारा जन्म हुआ है। पेट के लिए मजूरी करो। ऐसी खेती से बाज आये। में रूपए न दूंगी - न दूंगी।"

हल्कू उदास होकर बोला - "तो क्या गाली खाऊं?"

हल्कू ने रूपए लिए और इस तरह बहार चला, मानों अपना कलेजा निकालकर देने जा रहा हो। उसने मजूरी से एक-एक पैसा काट-काटकर तीन रुपए कम्बल के लिए जमा किए थे। वह आज निकले जा रहे थे। एक- एक पग के साथ उसका मस्तक अपनी दीनता के भार से दबा जा रहा था।

हल्कू आर्थिक दृष्टि से अत्यधिक दरिद्र है। खेत की रखवाली के लिए उसे रात खेत में, खुले आसमान के तले गुजारनी पड़ती थी। कम्बल के अभाव में पूस और माघ की ठंडी रात काटना संभव नहीं है। कपड़े के नाम पर उनके पास एक पुरानी चादर है, जो पूस की रात की अत्यधिक ठंडी पछवा पवन को रोकने में किसी प्रकार भी समर्थ नहीं है। खेत में तो कुछ हुआ नहीं इसलिए उसने मजदूरी करके कम्बल खरीदने के लिए तीन रुपए एकत्र किए थे। इनसे वह कम्बल खरीदना चाहता था। तभी साहुकार सहना सूद लेने आ जाता है। हल्कू गालियां खाने और झिड़कियां सुनने की अपेक्षा ठंड सहना उचित समझता है। पत्नी की बात में दम भी है - गाली क्यों देगा? क्या उसका राज है? राज किसी का हो, पर इसमें कोई संदेह नहीं कि हल्कू के लिए सहना ही राजा है, मुन्नी भी यह बात जानती है, इसलिए विरोध करने के बाद भी वह रूपए हल्कू को दे देती हैं।

हल्कू का पालतू कुत्ता है जबरा। हल्कू को उससे लगाव था। जबरा भी अपने मालिक से प्रेम करता था। तभी तो आगे - आगे ठंडी रात में खेत पर चला आया है। हल्कू खेत में हवा से बचने का कोई साधन न होने पर परेशान था। वह प्रयत्न करने पर भी सो नहीं पा रहा था। आठ चिलम पीने का भी कोई प्रभाव नहीं होता। पछवा हवा उसकी रंगों में बर्फ भर देती थी। कुछ उपाय न देखकर हल्कू कुत्ते के शरीर से गर्मी लेने के लिए उसे अपनी गोद में उठा लेता है। कुत्ते के शरीर से तेज दुर्गन्ध आ रही थी। हल्कू उस दुर्गन्ध का ध्यान न करके जबरा को किसी आत्मीय पुरुष के समान सीने से लगा लेता है। इस कार्य में हल्कू का पशु प्रेम कम और विवशता अधिक है।

किसान प्रायः चिलम में रखकर तम्बाकू पिया करते हैं। तम्बाकू पीने से शरीर में थोड़ी गर्मी आती है, पर यह तम्बाकू अथवा चिलम पीना पूस की ठंडी पछवा से छुटकारा नहीं दिला पाता। हल्कू भी इस बात को जानता है। खेत में अन्य कोई व्यक्ति तो है नहीं, मूक जबरा है। हल्कू उठा और अलाव में से जरा - सी आग निकालकर चिलम भरी। जबरा भी उठ बैठा। हल्कू ने चिलम पीते हुए कहा - "पियेगा चिलम। जाड़ा तो क्या जाता है, जरा मन बहल जाता है।"

सभी को अपने प्राण प्रिय होते हैं। खेत और खेती किसान को प्यारी होती है, पर प्राणों से अधिक प्रिय नहीं होती। हल्कू जानता था कि उसकी ईख की खेत के पास नीलगायें हैं। जबरा उन्हें कई बार भगा चूका है, पर हरीयाली चरने की लालची नीलगाय बार-बार आ जाती है। जो नीलगाय खेत के रखवाले के रहते हुए खेत में घुस आती है वे उसके बिना फसल छोड़ देगी क्या। यह जानकर भी हल्कू सोया पड़ा है। आग उसके पास है ही। पतझड़ का मौसम होने के कारण धरती पर गिरे हुए पतों के ढ़ेर लगा है। हल्कू एक खेत से अरहर के पैधे उखाड़ कर झाड़ू बना लेता है और उससे पत्तों को इकठ्ठा करके उसमें आग लगा देता है। पतों की आग गर्मी भी देती है और अंधकार को भी दूर करती है, पर पतों की आग लकड़ी के समान अधिक देर तक नहीं टिकती। इसीलिये हल्कू अलाव की राख के पास ही सो जाता है।

पत्तों में आग लगने की गर्मी पूस की रात की ठंड को थोड़ा भगा देती है। तब हल्कू को मनोरंजन सूझता है। वह जबरा से कहता है कि हम दोनों जलती हुई आग पर से छलांग लगाकर इस ओर से उस ओर पहुंचेंगे। हल्कू तो आग के ऊपर से छलांग लगाकर पार कर लेता है और इस ओर से उस ओर पहुंच जाता है, पर जबरा छलांग न लगाकर घूमता हुआ हल्कू के समीप आ जाता है। हल्कू उससे हंसी करता हुआ कहता है - "चलो-चलो, इसकी सही नहीं। ऊपर से कुदकर आओ।" वह फिर कूदा और अलाव के इस पार आ गया।

हल्कू आम के बाग में पत्तियों को जलाकर अपना शरीर गर्म करके आलस्य से भर उठा। अब उसमें शीत से लड़ने की शक्ति नहीं थी। जब तक उसने अपने आपको आग से तापकर गर्म नहीं किया था, तभी तक वह शीत को सहकर खेत की रखवाली कर रहा था, अपनी फसल बचा रहा था। शरीर को गर्म करते ही वह आलसी हो गया। जबरा कुत्ता जोर से भौंकता हुआ खेत की ओर भागा। हल्कू को भी ऐसा लगा कि जानवरों का एक झुण्ड उसके खेत में आया है। उसके बाद जानवरों द्वारा फसल चरने की आवाज भी हल्कू को सुनाई दी। खेत में नीलगाय आ गई थी और उनके कूदने ओर दौड़ने का शब्द सुनाई दे रहा था। कुत्ते के भौंकने से नीलगायों में खलबली मच गई। नीलगाय ईख को चरने की आवाज हल्कू को सुनाई पड़ रही थी। ठंड का सामना करने में असमर्थ हल्कू ने यह कहकर मन को समझा लिया की जबरा कुत्ते के होते हुए कोई जानवर खेत में आ ही नहीं सकता। जबरा उसे नोच ही डालेगा। उसने अपने मन को समझाया कि खेत

में जानवर नहीं है, मेरा भ्रम है। अगर खेत में जानवर नहीं है तो जबरा वहाँ क्या कर रहा है? उसने जबरा को आवाज दी - "जबरा, जबरा।"

जबरा अपने मालिक हल्कू के पास न आया और भौंकता रहा। इसके बाद उसको, जानवरों के द्वारा खेत को चरे जाने की आवाज सुनाई दी। अब हल्कू अपने आप को धोखा ना दे सका। उसे पता चल गया की जानवर उसका खेत खा रहे हैं, पर वह अपनी जगह से नहीं हिल सका। जहां वह सोया था, वहां बुझे हुए पत्तों के राख की गर्मी थी और खेत की ओर थी ठंडी हवा। उसने जानवरों को भगाने के लिए आवाज लगाई, पर खेत में जाने की बजाय, गर्म धरती पर चादर ओढ़कर सो गया।

जब हल्कू कम्बल खरीदने के लिए एकत्र किए हुए तीन रुपए सहना को देना चहता है तो उसकी पत्नी मुन्नी खेती की व्यर्थता पर व्यंग्य करती है की ऐसी खेती से क्या फायदा, जिसके होते हुए मजदूरी करनी पड़े, ऐसी खेती छोड़ दो। मुन्नी के स्वर में क्रांति है तो हल्कू के स्वर में विवशता। उस समय मुन्नी की बात हल्कू की समझ में नहीं आयी थी, पर आम के सूखे पत्तों के ढ़ेर के पास आग तापने के बाद चादर ओढ़कर उसके पास सोते हुए और हल्की गर्मी लेते हुए हल्कू को लगा कि खेत में ईख की अपेक्षा जीवित रहना आवश्यक है।
जबरा सारी रात भौकता रहता है, खेत में नीलगाय फसल खाती रही। किन्तु वह फसल की चिन्ता नहीं करता। मुन्नी आकर देखती है कि खेत उजड़ चुके हैं, नील गाय पूरी तरह से खेत चर चुकी है। वह हल्कू पर नाराज होती है कि उस्के होते हुये ऐसा कैसे हो गया? हल्कू बड़ी दीनता से अपनी आपबीती बताता है कि, बीती रात उसके पेट में बहुत दर्द हुआ, उसे तो लगा कि वह मर जायेगा, पर हल्कू मन ही मन बहुत खुश होता है कि, अब पूस की ठंड़ी रात में उसे खेत की रखवाली के लिये खुले आसमान के नीचे सोना नहीं पड़ेगा।

शरीफा शरवारी, +3 तृतीय वर्ष

प्रेमचंद

सन् अट्ठारह सौ अस्सी, लमही सुंदर ग्राम।
प्रेमचंद को जनम भयो, हिन्दी सहित काम।।
परमेश्वर पंचन बसें, प्रेमचंद कहि बात।
हल्कू कम्बल बिन मरे, वही पूस की रात।।
सिलिया को भरमाय के, पंडित करता पाप।
धरम ज्ञान की आड़ में, मनमानी चुपचाप।।
बेटी बुधिया मर गई, कफन न पायो अंग।
घीसू माधू झूमते, मधुशाला के संग।।
होरी धनिया मर गए, कर न सके गोदान।
जीवनभर मेहनत करी, प्रेमचंद वरदान।।
मुन्नी तो तरसत रही, आभूषण नहि पाई।
झुनिया गोबर घूमते, बिन शिक्षा के माहि।।
बेटी निर्मला कह रही, कन्या दीजे मेल।
जीवनभर को मरण है, ब्याह होय बेमेल।।
पंच बसे परमात्मा, खाला लिए बुलाय।
शेखा जुम्मन देखते, अलगू करते न्याय।।

शरीफा शरवारी, +3 तृतीय वर्ष (संग्रहित)

प्रकृति

खुशियां ले कर आया है ये सावन,
हुआ हरा-भरा ये सारा जग।
छा गयी हरियाली खेतों में,
भर गया मेरा आँगन।

ऐसा लग रहा है जैसे,
मन झूम गया है खुशियों से भर।
बरस रही है ये बारिष की बूंदे,
लेके बूंदों का जश्न।

धूप से झुलसी इस सुनहरी धरती को,
इन बूंदों ने दी एक नई उम्मीद।
चारों ओर छा गया खुशी का जश्न,
जैसे सबको मिल गया एक नया
जीवन।

यह संसार आज लगता है कितना सुंदर,
हृदय में सबके खुशियों का घर।
है एक छोटा सा निवेदन यही,
न करो इस सुंदर प्रकृति का शोषण।

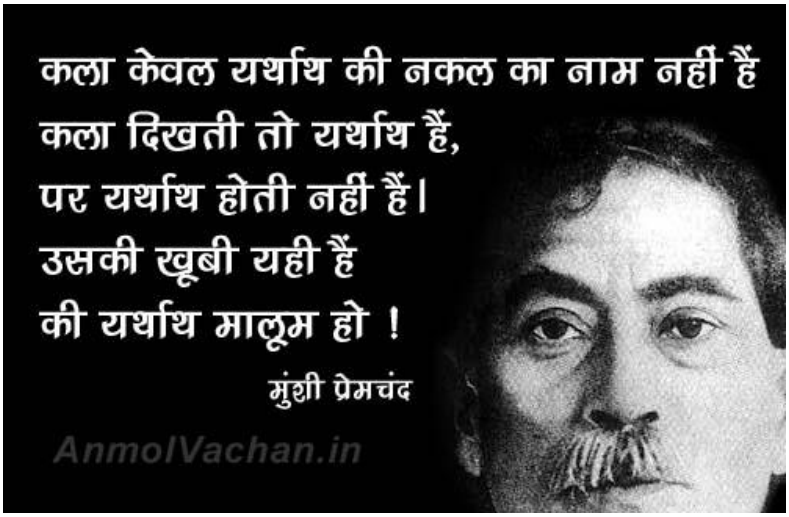

श्रद्धांजलि भउल, +3 तृतीय वर्ष

आदर्श की कसौटी पर रमानाथ

गबन एक चरित्र प्रधान उपन्यास है। कथानक की संभाविकता तथा रोचकता की अपेक्षा पात्रों का चरित्र विकास इसकी महत्वपूर्ण विशेषता है। इसी आधार पर उपन्यास का नायक रमानाथ का चरित्र प्रेमचंद जी ने अनेक उतार चढ़ाव के साथ दिखाया है। जिन स्वाभाविक प्रवृत्तियों को ले कर रमानाथ उपन्यास में अवतीर्ण होता है। वे उसकी परिस्थितियों के अनुकूल है। वह प्रारंभ में एक बेकार और आवारा युवक के रूप में हमारे सामने आता है। वह स्वभाव से शौकीन तबियत का है। आर्थिक समस्याओं के कारण रमानाथ को मैट्रिक के बाद पढ़ाने में उसके पिता अपनी असमर्थता व्यक्त करते हैं। उसके घर की आर्थिक स्थिति बहुत सामान्य है। यह जानते हूए भी वह कोई काम नहीं करता। पिताजी की आय कम होने के कारण ही उसे कॉलेज छोड़ना पड़ा। फिरभी वह 2 वर्ष तक बेकार रहा। वह इन 2 वर्ष में उसने सारे अमीरों वाले शौक पाल लिये, जैसे शतरंज खेलना और सैर सपाटे करता, दोस्तों से कपड़े मांगकर पहनना आदि। इसी कारण उसका भविष्य जीवन संघर्षमय हो जाता है।

इन सारे दुर्गुणों को अपनाते हुए भी रामनाथ अपने पिता को उचित अनुचित समझाया करता था। रमानाथ के पिता दयानाथ बहुत ही ईमानदार व्यक्ति थे। वे ऊपर की कमाई को पाप समझ्ते थे, और अपने पिता के इस आदर्शवादिता से वह बहुत चिढ़ता था। रामनाथ के मिथ्या प्रदर्शन की भावना दिनों दिन बढ़ती जा रही थी। वह दूसरों के पास अपने परिवार की स्थिति को बढ़ाचढ़ाकर बोलता था। शादी के बाद वह पत्नी जालपा से झूठ बोला था कि, बैंक में पचास हज़ार रुपये हैं, परिवार की आय बहुत ज्यादा है, परिवार के लोग सादा जीवन में विश्वास करते हैं, आदि। वह अपनी असली तनख्वाह भी छुपाता है और बढ़ा चढ़ा कर बताता है। वकील इंदुभूषण के सामने वह अपने आपको मुनिसिपालिटी का बड़ा पदाधिकार बताता है।

रमानाथ एक भावुक संकोची और भीरु व्यक्ति है। वह विवेकजन्य विचारों का सहारा लेकर जीवन यापन करता तो उस पर इतनी विपत्तियां न आती। उसकी संकोच शीलता और भीरुता उसके व्यक्तित्व की अपरिपक्वता का परिचय देता है। उसके मन में बार बार यह विचार आता है कि वह पत्नी जालपा से अपने ऋण संकट की बात कह दे, पर नहीं कह पाता है। रमानाथ की संकोचशीलता और भीरुता के एक नहीं अनेक प्रसंग उपन्यास में है। अपने संकोच की वजह से ही वह उधार पर गहने लेने लगता है और यहाँ तक कि वह गबन भी करता है। गबन करने के बाद वह वस्तुस्थिति जालपा से कह नहीं पाता है और कलकत्ते भाग जाता है। कलकत्ते में पुलिस के भय से वह घर से बाहर नहीं निकलता। जब निकलता है तो उसके आचरण की वजह

से पुलिस संदेह कर उसे गिरफ्तार कर लेती है और उसे क्रांतिकारियों के विरुद्ध झूठा गवाह देने के लिये मजबूर करती है। अपनी भीरुता की वजह से ही जालपा के मना करने पर भी वह अदालत में पुलिस के सिखाये झूठे बयान देता है, जिसकी वजह से बगुनाहों को सजा हो जाती है। रमानाथ का अपनी पत्नी जालपा के प्रति सच्चा अनुराग भी देखा जाता है। वह जालपा से इतना स्नेह करता है कि वह उसके "रोम रोम" में समा जाती है। जालपा को पाकर वह अपने आपको सौभाग्यशाली समझता है, और उसके लिए अपने प्राण तक न्योछावर करने को प्रस्तुत रहता है। पर रमानाथ के विचारों में स्थिरता नहीं है, वह जिसके पास जाता है, उसके अनुरूप हो जाता है। भविष्य की सुनहरी कल्पनाओं में डूब जाता है। सबकुछ भूलकर दूसरों के अनुरूप कार्य करने लगता है।रमानाथ के चरित्र में उज्ज्वल अंश भी है। वह हृदय से सरल और उदार है। इसीवजह से अपनी पत्नी को उसके झूठ की वजह से सजा भोग रहे परिवारों की सेवा करते हुए देख कर आत्मग्लानी से भर जाता है, तथा जज के पास जाकर सारी सच्चाई बता देता है।

इसतरह प्रेमचंद जी ने रमानाथ का चरित्रांकन बहुत ही मनोवैज्ञानिक तरीके से किया है। वह कोई आदर्श मानव नहीं जो मानवीय दुर्बालाओं और दोषों से सर्वथा मुक्त है, पर उपन्यास के अंत में प्रायश्चित कर आदर्श मानव के स्तर पर आ जाता है। वही मानव जीवन सार्थक है जो संघर्षों तथा अभावों से ऊपर उठता है, और उदात्त चरित्र को प्राप्त करता है। रमानाथ एक ऐसा ही व्यक्ति है।

सस्मिता, +3 द्वितीय वर्ष

कर्मभूमि उपन्यास में आदर्श नारी

प्रेमचन्द की "कर्मभूमि" में नारी किस तरह अपनी देश प्रेम से लीन होकर अपने प्राण भी देने के लिए पीछे नहीं हटती इसका उत्कृष्ठ उदाहरण सुखदा है। सुखदा धनावान परिवार की इकलौती पुत्री है। उसकी मां रेणुका देवी और पति अमरकांत है। उसके ऐश्वर्य और भोग की प्रवृति का अमरकान्त की त्याग की प्रवृति से समझौता नहीं हो पाता और वह उससे खिंचती चली जाती है। परंतु अमरकान्त घर से चले जाने पर यथार्थ चारित्र का विकास आदर्श की ओर क्रमशः होता है। वह अछूतों के मन्दिर मे प्रवेश के आंदोलन में सफलता प्राप्त कर जन-नेत्री बनजाती है। इसके बाद गरीबों के लिये भूमि-अर्जन हेतु आन्दोलन और हड़ताल का आयोजन करने के कारण जेल जाती है। जेल में वह साधारण कैदियों के साथ रहना पसन्द करती है, इस प्रकार यथार्थ से आगे बढ़ता हुआ आदर्श के चरत्मोत्कर्ष पर पहुँचकर उसका चरित्र सर्वाधिक आकषर्क बन गया है।

बड़े घर के बेटी होने के कारण सुखदा में भोग और ऐश्वर्य की प्रवृति के कारण अमरकान्त से खिंचती अवश्य है, परन्तु उसने अमरकान्त के परिश्रम और सेवाव्रती के अंकुर हैं। इसी कारण केस में फँसी मुन्नी का बचाव करती है। अमर के घर छोड़ देने पर वह भी साथ ही जाती है। वह अपनी मां का सहारा न ले कर घर चलाने के लिए कन्या पाठशाला में नौकरी करती है। स्वाभिमान के साथ अपनों के साथ आत्मीयता प्रेम का व्यवहार उसके चरित्र की प्रमुख है। आगे चलकर नैना उसकी तैयारी की हुई कर्मभूमि को अपनाकर अपना बलिदान देती है। सुखदा नारी गर्व की सहज भावना है। सकीना के प्रति अमरकान्त का प्रेम भी उसे कठोर बना देता है। ऐसे ही शंका वह अमरकान्त और मुन्नी के सम्बंध में करती है। परन्तु इस दोनों से यथार्थ स्थिति जानने पर लज्जित होती है और वह अमरकान्त के कर्ममय जीवन को अपनाने का संकल्प लेती है। आन्दोलन और हड़ताल के जुर्म में उसे गिरफ्तार कर लिया जाता है। लाला समरकांत के लाख प्रयत्न करने पर भी जमानत पर छूटने को तैयार नहीं होती और जेल चली जाती। उसका आन्दोलन सफल होता है। हर्षोल्लास के वातावरण में उसका अमरकान्त से मिलन होता है। सुखदा का चरित्र सामान्य धरातल से उठकर आदर्शवाद के उच्च धरातल की और बढ़ता जाता है। सुखदा भारतीय नारी के आदर्श की प्रतिष्टा करती हुई भोगविलास का परित्याग कर कठोर एवं तपस्या पूण जीवन अपनाती है और अपने त्याग एवं कर्त्तव्य परायणता से अपने पति अमरकान्त के हुदय को जीत लेती है।

स्वाति माधुरी, +3 द्वितीय वर्ष

नमक का दरोगा

यह कहानी उस युग की है जब भारत में नमक बनाने और बेचने पर कई तरह के कर लगा दिया गए थे और नमक विभाग के कर्मचारी ऊपरी कमाई कर रहे थे। यह कहानी समाज की यथार्थ-स्थिति को उदघाटित करती है।

कहानी के नायक मुंशी वंशीधर एक ईमानदार और कर्तव्यनिष्ठा की मिसाल है। वे एक निर्धन और कर्ज में डूबे परिवार के इकलौते कमाऊ व्यक्ति हैं, जिन्हें अपने पिता से नित्यप्रति ऊपर की कमाई लेने के उपदेश मिलते रहते थे। उन्हें किस्मत से नमक विभाग में दरोगा की नौकरी मिल जाती है। अतिरिक्त आमदनी के अनेकों मौके मिलने के बाद और वृद्ध पिता की अनेकों नसीहतों के बाद भी उनके मन का धर्म और उनकी ईमानदारी नहीं डगमगायी। पर जब भी उन्हें नमक की तस्करी के बारे में पता चलता है तो वे वहाँ पहुँच जाते हैं। वहाँ उन्हें पता चलता है कि नमक से भरी गाड़ियाँ जमींदार अलोपीदीन की हैं। जब पंडित अलोपीदीन को वहाँ बुलाया गया तो वे बड़े निश्चिन्तता से आए, क्योंकि अनको यकीन या कि सारे दरोगा को खरीदा जा सकता है, क्योंकि वे लक्षमी के अनन्य भक्त थे तथा धन की सत्ता से भली भाँति परिचित थे। वे मुंशीजी को हजार रुपये की रिश्वत देते हैं पर वंशीधर इसके लिए तैयार नहीं होते है। तब रिश्वत बढ़ते बढ़ते चालीस हजार तक पहुँच जाती है पर मुंशी जी का ईमान नहीं डगमगाया, और आलोपीदीन गिरफ्तार कर लिये जाते हैं।

तभी पूरे शहर में पंडितजी की खूब बदनामी हुई, लेकिन पंडितजी पैसों के दम पर अदालत से बाइज्जत बरी हो गए और मुंशी जी को नौकरी से हाथ धोना पड़ा।मुं शी जी को परिवार वालों का गुस्से और बहुत सारी मुसीबतों का सामना करना पड़ा। एक दिन पंडित अलोपीदीन मुंशी जी की ईमानदारी से प्रभावित होकर उन्हें ऊँचे वेतन और सुख सुविधाओं के साथ अपनी पूरी जायदाद का स्थाई मैनेजर नियुक्ति कर दिया।

यह कहानी धन के ऊपर धर्म की जीत की कहानी है। "धन और "धर्म" को क्रमश: सद्वृत्ति एवं असद्वृत्ति, बुराई और अच्छाई, असत्य और सत्य कहा जा सकता है।

सौदामिनी पाढ़ी, +3 द्वितीय वर्ष

अमरकांत

अमरकान्त कर्मभूमि उपन्यास का नायक है। यह उपन्यास मुंशी प्रेमचंद द्वारा लिखा गया है। प्रेमचंद का जन्म 31 जुलाई 1880 में हुआ था, मुंशी प्रेमचंद सिर्फ 'कलम के सिपाही' ही नहीं वरन् 'कलम के जादूगर' भी है। अमरकान्त कर्मभूमि उपन्यास के आरम्भ से अंत तक है। इस उपन्यास में अमरकान्त बहुत ही आदर्श, स्वाभिमान, समाज सेवक, एवं परिश्रमी है।

कर्मभूमि उपन्यास में प्रेमचंद जी ने एक आदर्श व्यक्ति अमरकान्त को नायक के रूप में प्रस्तुत किया है। अमरकान्त में नायक होने के सभी गुण मौजूद है, इसलिये अमरकान्त उपन्यास का नायक है। अमरकान्त धनी पिता लाला समरकान्त का पुत्र है। प्रारंभ में उसे धन-सम्पति का कोई मोह नहीं था, वह पिता के समान चोरी का सामान ना ही बेचता था ना ही उनके काले व्यापार में अमरकान्त अपने पिता का साथ देता था। वह अपने पत्नी सुखदा का ऐश्वर्य एवं धन-दौलत का साथ नहीं देता था। उसकी प्रकृति प्रारम्भ से ही त्याग, प्रेम एवं परिश्रम की है। वह चरखा कात के अपने ही बल बुते पर पैसे कमाता था। अमरकान्त को दूसरों के पैसों से कोई लगाव नहीं था, वह अपने मेहनत पर ही जीना चाहता था। पिता और पत्नी दोनों के ऐशो आराम से विरिक्त होकर उसने घर छोड़ दिया। वह एक गाँव चला गया, सबसे दूर रहने लगा और वहाँ जाकर वह अपने काम करने लगा। अमरकान्त उस गाँव में एक समाज सुधारक बन गया था और वहाँ के सामाजिक असुविधाओं को सुधारने लगा और लोगों में बदलाव होने लगा। इस सबके बाद अमरकान्त किसान आंदोलन का नेता बन जाता है, अहिंसावाद आंदोलन को वह जीत जाता है, आंदोलन की सफलता उसके चरित्र को आदर्श के उच्च स्थान पर पहुँचा देता है। वह एक सच्चा व्यक्ति है। वह गांधीवादी विचारधारा का है। चरखा कातने को आत्मशुद्धि का साधन मानता है। वह सत्याग्रह एवं असहयोग आंदोलन को अपनाता है। गांधीजी के समान यह बुराई में सुधार देखता है, वह बुरे को बुरा नहीं समझता। काले खां जैसे चोर में उसके प्रभाव से सुधार होता है, और वह आदर्श पात्र बन जाता है।

अमरकान्त स्वाभिमान युवक है। वह पिता से फ़ीस नही मांगता, उसकी फ़ीस उसका घनिष्ठ मित्र सलीम दे देता है। आगे चलकर उसे पिता द्वारा घर से निकाल दिए जाने

पर और धनवान सास रेणुका देवी के बुलाने पर न उसके पास जाता है न आर्थिक सहायता को स्वीकार करता है। वह किराये के छोटे मकान में रहना पसंद करता है।

अमरकान्त का सेवाव्रती रूप प्रारंभ से ही सामने आता है। वह मुन्नी के केस को दोबारा खोलता है एवं चंदा इकठ्ठा करता है। सुखदा से झगड़ा होने के बाद घर से निकल पड़ता है और गाँव में घूमता हुआ हरिद्वार के पास गूदड़ गाँव पहुंचाता है। यह चमारों का गाँव है, यहाँ अमरकान्त की जनसेवा की कर्मभूमी का विस्तार होता है। मुन्नी और सलोनी को अपने कर्म एवं सेवा भाव से मुग्ध कर देता है। यह बच्चों की शिक्षा के लिए पाठशाला खुलवाता है। उसके प्रभाव से गूदड़ गाँव के चमार ही नहीं अपितु आस पास के गाँव के चमार भी मरे पशुओं का माँस खाना और शराब पीना छोड़ देते हैं।

अमरकान्त अथक परिश्रमी है। यह उसी पैसे पर अपना अधिकार मानता है, जिसे उसने मेहनत से कमाया हो। सुखदा के सिनेमा जाने के आग्रह पर कहता है “जो आदमी कुछ उपार्जन न करता हो उसे सिनेमा देखने का कोई अधिकार नहीं है। मैं उसी सम्पति को अपना समझता हूँ जिसे मैंने अपने परिश्रम से कमाया हो।

प्रज्ञा दास, +3 द्वितीय वर्ष

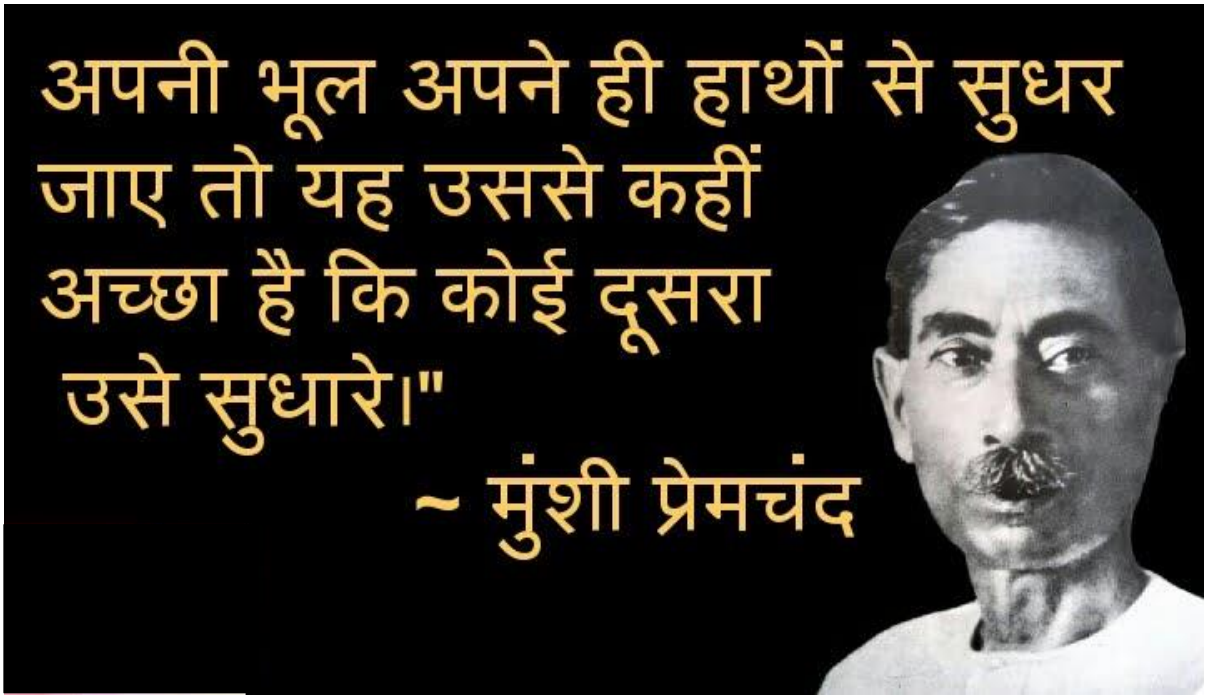

मुंशी तोताराम

मुंशी तोताराम उस पुरुष - समाज का प्रतिनिधित्व करता है, जो सदियों से नारी-प्रपीड़क रहा है। इसके अतिरिक्त मुंशी तोताराम एक शंकालु पति ही नहीं, शंकालु पिता भी हैं और अपने परिवार के सर्वनाश के लिए सर्वाधिक उत्तरदायी है।

वकील साहब का नाम था - मुंशी तोताराम। साँवले रंग के मोटे ताज़े आदमी थे। उम्र तो अभी चालीस से अधिक न थी, पर वकालत के कठिन परिश्रम ने सिर के बाल पका दिए थे। व्यायम करने का उन्हें अवकाश न मिलता था। यहां तक कि कभी कहीं घूमने भी न जाते, इसलिए तोंग निकल आयी थी, और शरीर रोग जर्जर हो रहा था। मुंशी तोताराम ने कम उम्र की निर्मला से विवाह किया था, और यह विवाह एक अनमेल विवाह था।

निर्मला को प्रसन्न रखने के लिए उनमें जो स्वाभाविक कमी थी, उसे वह उपहारों से पूरा करना चाहते थे। निर्मला के लिए रोज़ कोई न कोई तोहफा लाया करते थे। लड़के के लिए थोड़ा दूध आता था, पर निर्मला के लिए मेवे, मुरब्बे, मिठाईयां किसी भी चीज़ की कमी न थी। अपनी जिंदगी में कभी सैर-तमाशे देखने न गए थे, पर अब छुटियों में निर्मला की सिनेमा, सर्कस, थियेटर दिखाने ले जाते थे। अपने बहुमुल्य समय में से थोड़ा सा समय उसके साथ बैठकर ग्रामोफ़ोन बजाने में व्यतीत किया करते थे।

मुंशी तोताराम धीरे-धीरे रंग बदलने लगे। पहले बालों से शुरू किया, फिर सुरमे की बारी आई, यहां तक कि एक-दो महीने में उनके तेवर ही बदल गये। गजलें याद करने का प्रस्ताव तो हास्यास्पद था, लेकिन वीरता की डिंग मारने में कोई हानि न थी।

वह रोज़ अपनी जवांमर्दी का कोई न कोई प्रसंग अवश्य छेड़ देते। निर्मला को सन्देह होने लगा कि कहीं इन्हें उन्माद का रोग तो नहीं हो रहा है। निर्मला पर इस पागलपन का और क्या रंग जमता? हाँ, उसे उन पर दया आने लगी। क्रोध और घृणा का भाव जाता रहा। क्रोध और घृणा उस पर होती है, जो अपने होश में हो, पागल आदमी तो दया का ही पात्र होता है।

निर्मला ने सोचा था कि जब कुछ अभ्यास हो जाएगा, तो वकील साहब को एक दिन अंग्रेजी में बातें करके चकित कर दूंगी। कुछ थोड़ा सा ज्ञान तो उसे वकील साहब के बेटों से ही हो गया था। अब वह नियमति रूप से मुंशीजी के बड़े बेटे से पढ़ रही थी।

वकील साहब जब वकील साहब को पता चला तो उनकी छाती पर साँप लोटने लगे, तेवर बदल कर बोले -

“वो कब से पढ़ा रहा है तुम्हें? मुझसे तुमने कभी नहीं कहा।“

निर्मला ने उनका यह रूप एक बार देखा था, जब उन्होंने सियाराम को मारते - मारते बेदम कर दिया था। वही रूप और भी विकराल बनकर आज उसे फिर दिखाई दिया। सहमती हुई बोली - "उनके पढ़ने में तो कोई हर्ज नहीं होता, में उसी वक्त उनसे पढ़ती हूँ, जब उन्हें फुरसत रहती है। पूछ लेती हूँ कि तुम्हारा हरज होता है तो जाओ। वह जब खेलने जाने लगते हैं, तो दस मिनट के लिए रोक लेती हूँ। मैं खुद चाहती हूं कि उनका नुकसान न हो।"

बात कुछ न थी, मगर वकील साहब हताश होकर चारपाई पर गिर पड़े और माथे पर हाथ रखकर चिंता में मग्न हो गये। उन्होंने जितना समझा था, बात उससे कहीं अधिक बढ़ गयी थी। उन्हें अपने ऊपर क्रोध आया कि मैंने पहले ही क्यों न इस लौंडे को बाहर रखने का प्रबंध किया? आजकल जो महारानी इतनी खुश दिखाई देती हैं, इसका रहस्य अब समझ में आया। पहले कभी कमरा सजा-सजाया न रहता था, बनाव - चुनाव भी न करती थीं, पर अब देखता हूँ, कायापलट सी हो गयी है। जी में तो आया कि इसी वक्त चलकर मंसाराम को निकाल दूं, लेकिन प्रौढ़ बृद्धि ने समझाया कि इस अवसर पर क्रोध की जरूरत नहीं। कहीं उसने भाँप लिया तो गजब ही हो जाएगा। हाँ, जरा इसके मनोभावों को टटोलना चाहिए।

मुंशीजी को निर्मला के निर्दोष होने का विश्वास हो गया। पर कब? जब हाथ से तीर निकल चुका था - जब मंसाराम की मृत्यु हो गयी। पुत्र शोक में मुंशीजी का जीवन नरक स्वरूप हो गया। उस दिन से उनके ओठों पर हँसी न आई। यह जीवन अब उन्हें व्यर्थ सा जान पड़ता था। कचहरी जाते, पर मुकदमे के पैरवी करने के लिए नहीं, केवल दिल बहलाने के लिए, घंटे दो घंटे में वहां से उठकर चले आते। निर्मला अच्छी चीज पकाती, पर मुंशीजी दो - चार कौर से अधिक न खा सकते। मंसाराम के कमरे की और जाते ही उनका हृदय टूट जाता था। जहां उनके आशाओं का दीपक जलता रहता था, वहां अब अंधकार छाया हुआ था।

इस तरह तोता राम अपने ही लगाई आग में जल गये, निर्मला उपन्यास अनमेल विवाह से होने वाले व्यक्तिगत, पारिवारिक और सामाजिक समस्याओं का यथार्थ दस्तावेज है।

मामानी रेड्डी, +3 तृतीय वर्ष

दलित जीवन की त्रासदी - ठाकुर का कुआँ

हिंदी कहानियों के विकास इतिहास में प्रेमचंद का आगमन एक महत्वपूर्ण घटना है। प्रेमचंद की कहानियों के बारे में राजेन्द्र यादव ने लिखा है, 'वेश्या, अछूत, किसान, मजदूर, जमींदार, सरकारी अफसर, अध्यापक, नेता, क्लर्क समाज के प्रायः हर वर्ग पर प्रेमचंद ने कहानियां लिखी हैं, और राष्ट्रीय चेतना के अंतर्गत विशेष उत्साह और आदर्शवादी आवेश से लिखी है। मगर मूलतः उनकी समस्या तत्कालीन दृष्टि से वांछनीय-अवांछनीय, शुभ-अशुभ के चुनाव की है। परिणति वांछनीय और शुभ की ओर उन्मुख होने की है। वह समस्या और उनका हल साथ ही देते हैं।

राष्ट्रीय चेतना में प्रेमचंद गांधी से प्रभावित थे तो आर्थिक विषमता को दूर करने के लिए वे साम्यवाद का सहारा लेते हैं। प्रेमचंद की कहानियों में आदर्शवाद के बदलते रूप देखाई देते हैं जो समसामयिक युगबोध को स्पष्ट करते हैं। प्रारंभिक कहानियों में प्रेमचंद पूर्णत: आदर्शवादी दिखाई देते हैं। बड़े घर की बेटी, पंच परमेश्वर, नमक का दरोगा, उपदेश, परीक्षा, अमावस्या की रात, पछतावा आदि कहानियों में कर्तव्य, त्याग, प्रेम, न्याय, मित्रता, देश सेवा आदि की प्रतिष्ठा हुई है। बाद की कहानियों में आदर्शवाद यथार्थ में बदलता जाता है।

प्रेमचंद की कहानियों पर तथा उनके युग के कहानी साहित्य पर तत्कालीन राजनीतिक और सामाजिक परिस्थितियों का प्रभाव स्पष्ट दिखाई देता है। हिंदी कहानी के विकास में प्रेमचंद का महत्वपूर्ण योगदान है। इस बारे में डॉ. नगेन्द्र ने लिखा है "हिंदी कहानी अपने विकास की प्रारंभिक अवस्थाओं को पारकर वहाँ पहुँची है जहाँ से हमें इसके श्रेष्ठ रूप के दर्शन होने लगते हैं।

प्रेमचंद जी ने बहुत सारी कहानियां लिखी है, उनमें से "ठाकुर का कुआँ" उनकी एक श्रेष्ठ कृति है।

ठाकुर का कुआँ

प्रेमचंद ने इस कहानी के माध्यम से भारतीय जातिप्रथा की सबसे घृणित परंपरा अस्पृश्यता के कारण तिरस्कार, अपमान और मानवीय अधिकारों से वंचित जीवन जी रहें अछूतों की सामाजिक और आर्थिक स्थिति को अभिव्यक्त किया है। पानी के लिए तरसते अछूत जीवन की वास्तविक कहानी है यह।

कहानी

जोखू बीमार है, और प्यास के कारण बेहाल है। गंगी कल रात जो पानी भर लायी थी, तब उसमें बास नहीं थी। लेकिन जब दूसरे दिन जोखू पानी पीने लगता है तो उसमें से सड़ी हुई बास आती है। गंगी उसे पानी पीने से रोक देती है। उसे डर है कहीं जोखू और ज्यादा बीमार न हो जाए। वह ताजा पानी भर लाने की बात करती है। लेकिन जोखू उसे मना करता है कि ठाकुर के कुएँ पर कौन चढ़ने देगा। नाहक हाथ पांव तुड़वा आयेगी इसलिए उसे वह चुपचाप बैठी रहने के लिए कहता है। वह जानता है कि यह असंभव है कि गंगा ठाकुर या साहू के कुएँ पर चढ़कर पानी से आ सकती है। गंगी जिद करती है की वह कम से कम मांगकर ही सही एक लोटा पानी ले आएगी। वह देर तक इंतेजार करती है और जब सभी लोग सोने चले जाते है, ठाकुर दरवाजा बंद करके अंदर चले जाता है तो वह लपककर कुएँ पर चले जाता है। एक घड़ा पानी भी वह खींच लेती है। घड़ा जगत पर रखने ही वाली होती है कि ठाकुर का दरवाजा खुलता है। गंगी देखती है कि शेर भी भयंकर मुंह वाला ठाकुर दरवाजे पर खड़ा है। दशहत के मारे गंगी के हाथ से रस्सी छूट जाती है और घड़ा पानी में गिरने की आवाज सुनाई देती है। गंगी पूरी ताकत से कुएं की जगत से कूद कर भागती हुई घर पंहुचती है। वह देखती है कि जोखू लोटा मुंह को लगाए मैला गंदा पानी पी रहा है।

जातिप्रथा और छूआछूत

'ठाकुर का कुआँ' में चित्रित घटना, मात्र एक घटना या प्रसंग नहीं है, यह दलित जीवन की त्रासदी की अभिवक्ति है। त्रासदी यह है कि अछूतों को ठाकुर या साहू के कुएँ से पानी लेने का अधिकार नहीं। जाति प्रथा और छुआछूत के कारण अछूत किस दुर्दशा का शिकार हैं और वे पानी जैसी जीवन की बुनियादी जरूरत के लिए किस प्रकार का सवर्णो की दया पर निर्भर हैं, इसे प्रेमचंद ने प्रस्तुत कहानी के द्वरा उजागर किया है। वैसे छुआछूत की प्रथा के कारणों पर कोई प्रकाश प्रेमचंद ने इस कहानी के माध्यम से नहीं डाला। लेकिन इस कहानी के अध्ययन के साथ-साथ जातिप्रथा की निर्मित हिंदू धर्म की जिस विचारधार की उत्पति है उसे समझना हमारे लिए नित्यन्त जरूरी है। यह एक अमानवीय धार्मिक अवधारण है, जो कि मानव-मानव के बीच में इस कदर असमानता व भेदभाव का विषैला बीज बोती है, जिसके कारण आज तक जाति व्यवस्था न केवल कायम है बल्कि छुआछूत के कारण देश की आबादी की एक चौथाई से ज्यादा जनसंख्या अपनी ही भूमि पर बहिष्कृत

की तरह जीवन जीने के लिए बाध्य है। धर्म ग्रंथों का हवाला देकर हिन्दू धर्म ने न केवल जाति का निर्माण किया बल्कि इसांनों को उच्च और निम्न श्रेणियो में विभाजित करके प्राकृतिक संसाधनों पर उनके अधिकारों को भी तय किया है। अछूतों को संपति अर्जित करने और संपत्ति संग्रह के अधिकार से उसे वंचित किया। हिन्दू धर्मशास्त्र के अनुसार व्यवहार करने पर अछूत अगले जन्म में उच्चजाति में जन्म ले सकता है। यह हिन्दू धर्म की मान्यता है। जिस कर्मफल, पुनर्जन्म सिद्धांत ने वर्तमान जीवन मे दलितों को अभाव, अपमान और घृणा सहने के लिए मजबूर किया वह मानवनिर्मित धर्म और शास्त्र की उपज है, जो मानव को न केवल गुलाम बनाए रखना है बल्कि सदियों तक उसकी आर्थिर्क अधिकार का निर्धारण भी करता है।

इस कहानी में प्रेमचंद अछूतों की दयनीय आर्थिर्क दशा, उनकी निम्न सामाजिक प्रतिष्ठा और हर रोज अस्पृश्यता के कारण अपमान जनक स्तिथियों से गुजरने की पीड़ा को अभिवक्ति दे रहे हैं। पानी के स्रोत ऊँची जातियों के अधिकार में होने और अछूतों के साथ अस्पृश्यता का व्यवहार बरता जाने के कारण अछूत, ठाकुर - राजपूत या साहू कुआँ से पानी नहीं ले सकते। पानी जो मानव जीवन की नितांत जरूरत है, जिसके लिए एक इंसान को बेबस होना पड़े, और अनुस्मृति के विधानों का पालन करने में सवर्ण समाज आज भी लज्जा महसूस न करें, अमानवीय अत्याचार करके जाति अहं की तुष्टि करें, यह कहानी सम्पूर्ण संसार मे धार्मिक कट्टरता का एक अकेला उदाहरण है। अछूतों के प्रति शासनतंत्र, न्यायपालिका और पुलिस कितने असंवेदनशील और जातिवादी है प्रेमचंद की यह कहानी स्वाधीनता आंदोलन की पृष्ठभूमि की सामाजिक, आर्थिर्क, धार्मिक स्थिति की सच्चाई को हमारे समक्ष खोल देती है। गंगी यह जानते हुय भी कि पकड़ी जाने पर उसे, उसकी इस धृष्टता के लिए माफ नहीं किया जायेगा बल्कि जातिप्रथा की परंपरा को तोड़ने जैसा अपराध करने और परंपरागत हिन्दू धर्म की रूढ़ियों, सवर्णो की सत्ता, वर्चस्व और ब्राह्मियवाद जैसे शक्तियों के खिलाफ जाने के कारण कठोर से कठोर दंड दिया जा सकता था। गंगी की पहल चाहे मजबूरी में ही क्यों न कि गई है, लेकिन जातिव्यवस्था के खिलाफ जाकर पानी लेने का साहस था। घड़े को पांव में डाल कर उसने बहुत ही आहिस्ते से उसे ऊपर खींचा जिससे कोई आवाज न हो और ठाकुर या अन्य कोई घर का सदस्य जाग न जाए। एक घड़े पानी के लिए गंगी मानसिक व जातिगत दबाव को झेल रही थी और साथ ही पकड़े जाने पर उसके सामने जाने वाले स्थिति से भी अवगत थी। इसीलिए वह रस्सी को तेजी से खिंचती चली गई शायद कोई पहलवान ही घड़े को इतनी तेजी से खींच सकता

था। लेकिन गंगी द्वारा ली गई सावधानी, दिखाई गई तेजी और दृढ़ संकल्प का नतीजा कुछ नहीं निकला। ठाकुर के घर का दरवाजा खुला, गंगी इस स्थिति से जूझने के लिए तैयार नहीं था।

गंगी में इतना साहस कहाँ से आता कि वह धर्म की रक्षक बनकर अपनी पूरी क्रूरता के साथ जातिप्रथा और अस्पृश्यता को बनाए रखने के लिए खड़े ठाकुर का डटकर मुकाबला करें। और प्रेमचन्द स्वयं भी दलित अस्मिता आंदोलन से उत्पन्न दलित चेतना के प्रभाव को गंगी द्वरा देखना नहीं चाहते थे।

पानी का अथाह भंडार जो कुदरती सम्पति है, जिस पर कथित ऊंची जाति का स्वामित्व हो और अछूत पानी की एक बूंद लेने का हकदार नहीं हो। यह तत्कालीन सामाजिक, धार्मिक और सांस्कृतिक स्थिति की वास्तविकता को उजागर करती है। एक वर्ग को सत्ता, संपति और श्रेष्ठता बहाल करके कथित निम्न वर्ग को आभव, अपमान को झेलते और अवहेलना को सहते रहने का पर्याय बनाए रखना कहाँ का न्याय है? जाती और वर्ग व्यवस्था पर प्रश्नचिन्ह लगाती यह कहानी जितनी तत्कालीन समय में प्रासंगिक थी आज के संदर्भ में भी उतनी ही प्रासंगिक है।

इस कहानी को पढ़ने के बाद हमारे सामने कहानी के माध्यम से उठाई गई सामाजिक समस्या का एक संपूर्ण चित्र उभर आया है। प्रेमचंद ने तत्कालीन समय में भारतीय समाज की ज्वंलत समस्या जातिप्रथा से उत्पन्न छुआछूत जैसी अपमानजनक, मानवता विरोधी, जघन्य परंपरा की वस्तविकता को उघाड़ा है। जोखू और गंगी अछूत है, इसलिए उन्हें सवर्णो के कुएँ से पानी लेने का अधिकार नहीं। अछूत जीवन की मूलभूत जरूरत के लिए सवर्ण या तथाकथित उच्च मानी गई जातियों पर निर्भर है। सामाजिक, सांस्कृतिक और धार्मिक जगहों में उनकी उपस्थिति निषेध मानी गई तथा संपति प्राप्त करने व रखने के भी ये अधिकारी नहीं। आर्थिक उत्पादन की संपूर्ण व्यवस्ता में इनकी भागीदारी केवल बेगारी करने वाले मजदूर मात्र की है। उत्पादन के साधनों पर अधिकार के अभाव के अछूत गरीबी की दयनीय स्थिति में पानी, अन्न से वंचित जीवन जीने के लिए बाध्य है। आज भी अछूत अश्पृश्यता के कारण अपमानबोध से ग्रसित है। गरीबी की स्थिति में अभावपूर्ण जीवन जीने के लिए विवश हैं। पानी के स्त्रोत अभी भी इनके छूने से अपवित्र होते हैं, यह तथाकथित उच्च वर्ग की मानसिकता में जस का तस बैठा हुआ है।

प्रियदर्शिनी, +3 द्वितीय वर्ष

एक कविता उनके सम्मान में -

1880 में जुलाई 31 में हुआ था एक प्रतिभा का जन्म,
अजायब राय और आनंदी देवी के जीवन में छा गया खुशियों का जश्न ।।
धनपत राय श्रीवास्तव रखा गया उनका नाम,
बचपन से ही करते थे शिक्षा का वे सम्मान ।।
जब छोड़ दिया उनका साथ उनकी जन्मदात्री ने,
बचपन बिता था उनकी गरीबी की दशा में ।।
गरीबी से लड़ते-लड़ते वे पहुँच गए दसवीं कक्षा तक,
और पढ़ने की इच्छा रह गयी उनकी सपनों में ।।
शौतेली माँ ना दे सकी उन्हें स्नेह,
15 साल की उम्र में बांध दिया उन्हें शादी के बंधन में ।।
खुशी की कोई निशानी नहीं थी उनके वैवाहिक जीवन में,
ये बात पिताजी को एहसास हुआ अपनी अंतिम समय में ।।
सिर पर आगया घर का सारा बोझ,
जीवन बीताया उन्होंने आर्थिक समस्याओं में ।।
उन्होंने आरंभ किया सहित्य का सर्जन,
गरीबी और अभाव जैसी जीवन की प्रतिकूल परिस्थितियों में ।।
शुरु किया उन्होंने लिखना तेरह वर्ष की उम्र में,
बाद में उपन्यास आरंभ किये उन्होंने उर्दू में ।।
इस तरह उनका साहित्यिक सफर हुआ था शुरु,
जो एक नया सम्मान लाया उनके जीवन में ।।
हिंदी साहित्य जगत को दिया उन्होंने एक नई दिशा,
उनके उपन्यास और कहानी में स्पष्ट दिखाई देता है उनका अवदान।।
मुंशी प्रेमचंद के नाम से हो गयी उनकी पहचान,
उनके युग को सब देते हैं प्रेमचंद युग का नाम ।।
कफन, गबन, कर्मभूमि है श्रेष्ठ कृति सबसे,
उन्होंने दिखाया है स्पष्ट रूप से समान्य मानव जीवन की दशा ।।
उन्होंने प्रदान किया हिंदी सहित्य जगत को देशभक्ति,
दलित साहित्य, स्त्री-विमर्श से भरी एक नई छवि ।।
अनेक उपन्यास, अनेक कहानी लिखे हैं वे उर्दू और फारसी में,

अनेक कविगण कहते है जादू है उनकी लेखनी में।।
1936 में उनके निधन में सहित्य जगत था एक सदमें में,
पर वे आज तक भी है हम सबके हृदय में।।
उनकी रचना है सजीव और चिरस्मरणीय,
उनको है आज हमारा सहस्र नमन ।।

श्रद्धाजंलि भउल, +3 तृतीय वर्ष

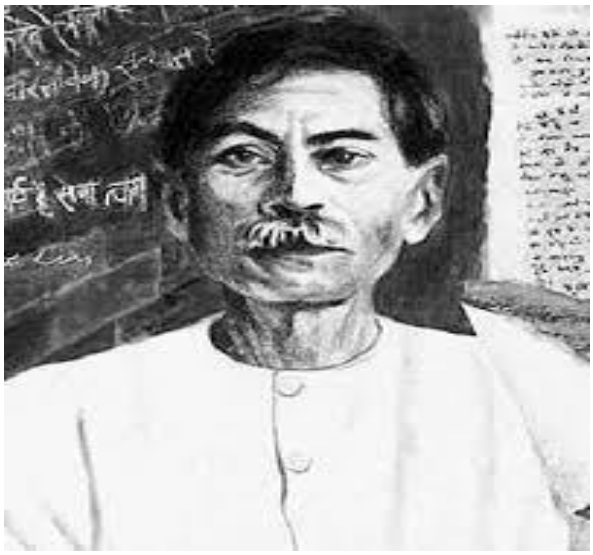

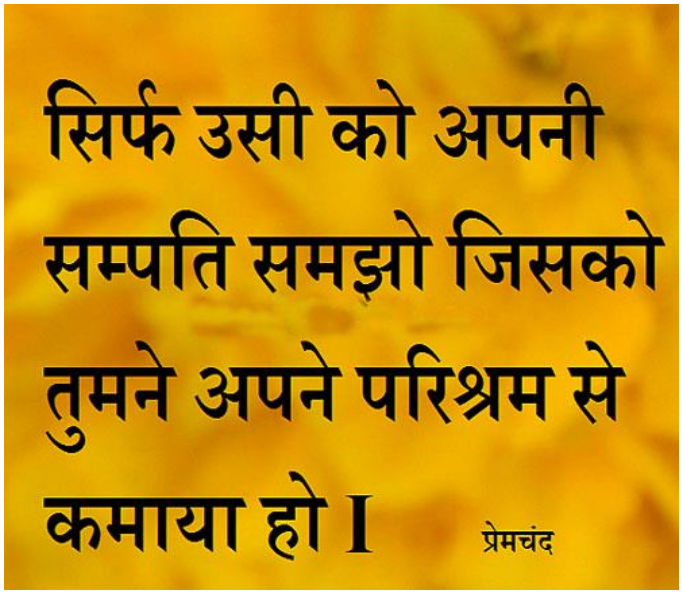

कर्मभूमि के नारी पात्र

"कर्मभूमी" प्रेमचंद जी का एक उपन्यास है, जो उन्होंने आंदोलन के दिनों में लिखा था। इस उपन्यास की पृष्ट भूमि शहर और गांव के अछूतों पर आधारित है। इस उपन्यास की कथावस्तु जमीन की समस्या, लगान कम करने की समस्या, खेत-मजदूरों और गरीब किसानों के लिए जमीन की समस्या एवं युगीन सामाजिक व्यवस्था पर पर्यवेशित है। इस उपन्यास में एक सामाजिक आंदोलन का सूत्रपात होता है, जिसके प्रवाह में विद्यार्थी, किसान, अछूत, स्त्रियां, शिक्षक, व्यापारी, मजदूर यह सभी बह चलते हैं। इस आंदोलन के प्रवाह में स्त्रियों का एक भिन्न स्रोत देखने को मिलता है।

प्रेमचंद ने अपने इस उपन्यास में नारी के सभी रूपों का चित्रण बड़े ही सुंदर तरीके से किया है। जहां पर उन्होंने नारी की कमजोरियों के साथ साथ उसकी शक्ति को भी प्रदर्शित किया है। उन्होंने अपने इस उपन्यास में नारी के सभी पहलुओं को अपनी रचना के माध्यम से प्रस्तुत किया है। जिसमें उन्होंने नारी को फूल की तरह कोमल एवं पत्थर की तरह सख्त दर्शाया है। यानी प्रेमचंद ने इस उपन्यास की नायिका सुखदा के चरित्र को पत्थर के ढांचे में ढाला है, तो वहीं पर कथा नायक के प्रेमिका सकीना को फूल के ढांचे में।

सुखदा का चरित्र नारी का दृढ़ और प्रभावशाली रूप है। वह एक विलासिनी एवं आत्मकेंद्रित नारी है। जैसे पानी रोज उसी मार्ग से बह कर एक ना एक दिन अपने मार्ग में पड़े पत्थर को काटता है, ठीक उसी भाँति सुखदा का चरित्र भी समय के स्रोत में बदलती अवश्य है पर उसे बदलने में, अपने पती के विचार धारा को और सामाजिक स्थिति को समझने में वक्त लगता है। सुखदा एक सम्पन्न एवं धनी परिवार की इकलौती कन्या है। जो भोग और विलास को जीवन की सबसे मूल्यवान वस्तु समझती है। अभाव क्या है उसने कभी जाना ही नहीं और न ही कभी जीवन की कठिनाइयों को समझा था। वह एक युवक प्रकृति की युवती थी। जिसे कभी सिकुड़ने और सिमटने का अभ्यास था ही नहीं। इसका अर्थ यह है कि उसने कभी परिस्थितियों के हिसाब से और समय के ढांचे के मुताबिक आपने को बदलना सीखा ही नहीं था। सुखदा उपन्यास के नायक की पत्नी थी।

वहीं पर प्रेमचन्द जी ने कर्मभूमी में सकीना के चरित्र को फूल की भांति कोमल दर्शाया है। सकीना एक मासूम लड़की थी। दुःख और अभाव जैसे उसके बचपन के साथी थे। जीवन में सुख क्या है शायद उसे पता ही नहीं था। विलास -व्यसन की या सुख पूर्ण जीवन

की कल्पना शायद उसने कभी किया ही नहीं था, और न ही कभी उसने जीवन के समीकरणों को नापा था। वह समय के स्रोत के साथ बहती चली जाती थी। जीवन के हर ढांचे में ढ़ल जाती थी। इसका अर्थ यह है कि एक धैर्य शील नारि की भांति वह परिस्थितियों के मुताबिक जीवन व्यतीत करना जानती थी। सकीना उपन्यास के नायक की प्रेमिका थी।

कर्मभूमी के ये दोनों नारी पात्र भारतीय नारी के दो पहलू हैं, जो कि एक दूसरे से संपूर्ण भिन्न हैं। एक स्रोत को अपने हिसाब से बहना जानती है तो दूसरी स्रोत के साथ बहना जानती है। कर्मभूमी के ये दो नारी पात्र शक्कर और रेत की तरह है। एक पानी में मिलते ही उसमें घुल जाती है दूसरी पानी में एक क्षण के लिए मिल कर अलग हो जाती है।

प्रेमचन्द के इस उपन्यास में जहां सुखदा का चरित्र दृढ़ और प्रभावशाली रहा वहीं पर सकीना का चरित्र कोमल और हृदय स्पर्शी। "कर्मभूमी" में सुखदा और सकीना केवल यह दो नारी पात्र नहीं है, बल्कि मुन्नी के रूप में प्रेमचन्द एक और नारी पात्र का चित्रण अपने उपन्यास में किया है। जहां उन्होंने नारी के क्रांतिकारी रूप को भी प्रदर्शित किया है।

प्रेमचन्द ने मुन्नी के रूप में नारी के एक ऐसे चरित्र का वर्णन किया है, जिसने अपने आत्मसम्मान के खातिर अपने ऊपर हुए अन्याय का बदला लेती है। अपना आबरू खोने पर भी वह अपना आत्मबल बनाये रखती है, और किसी के दया का पात्र नहीं बनना चाहती। वह आत्मनिर्भर होकर रहना चाहती है। वह इतनी दृढ़ होती है कि अपने पती के पास भी दुबारा नहीं लौटती।

सुखदा, सकीना और मुन्नी की तरह नैना भी प्रेमचन्द के कर्मभूमी उपन्यास के और एक प्रमुख नारी पात्र है। नैना सहनशील रूप को प्रतिपादित करती है। वह अपने कर्तव्यों को बख़ूबी निभाती है। बिना किसी से शिकायत के वह अपनी जिंदगी जीती है एवं अंत में समाज के लिए अपनी जान गवाँ देती है।

"कर्मभूमी" में रेणुका देवी और पठानिन जैसे नारी पात्र भी हैं, जो एक दूसरे से पूर्ण रूप से भिन्न है। रेणुका देवी के चरित्र में नारी के विलासिनी रूप को दर्शाया गया है, वहीं पर पठानिन के रूप में नारी की स्वाभिमान का प्रतिपादन किया गया है। रेणुका देवी एक धनी और संपन्न विधवा औरत है जो अपनी वृद्धावस्था में पदार्पण कर चुकी है, और अपने बाकी का जीवन दान, पुण्य और तीर्थ आदि में बिताना चाहती हैं। दूसरी ओर पठानिन

अभावग्रस्त वृद्धा है जो अपने जवान पोती के भविष्य और उसकी शादी को लेकर चिंतित है। मगर वह अपने स्वाभिमान की खातिर सकीना और कथानायक के रिश्ते को स्वीकार नहीं करती। अपने दम पर अपने घर का गुजारा करती है।

"कर्मभूमी" के ये सभी नारी पात्र भिन्न भिन्न हैं। इनका स्वभाव, विचारधारा एवं जीवनशैली एक दूसरे से पूर्णतया भिन्न हैं। मगर जैसे अंत में नदिया सागर में समा जाती हैं, ठीक उसी तरह कर्मभूमी के यह सभी नारी पात्र समय के साथ बदल कर समाज के हित के लिए इस आंदोलन रूपी सागर में स्वयं को समा देती हैं। इस प्रकार प्रेमचन्द कृत कर्मभूमी के सभी नारी पात्र अपने अपने कमियों और खूबियों के साथ उभर कर सामने आते हैं ।

+3 तृतीय वर्ष, सुभश्री शाताब्दी दास

ईदगाह

ईदगाह एक चार साल की अनाथ बच्चे की कहानी हैं, जिसका नाम हामिद है। जो अपनी दादी अमीना के साथ रहता है। हामिद इस कहानी का मुख्य पात्र है। जो अपने माता पिता को खो चुका था, लेकिन उसकी दादी ने उसे बताया कि उनके पिता पैसे कमाने के लिए उसे छोड़ कर गये हैं, और उसकी मां अल्लाह से उसके लिए सुंदर उपहार लाने के लिए गई है। यह उम्मीद में हामिद था। अपने चारों तरफ की दरिद्रता के बावजूद अमिना अपने पोते के अच्छे भविष्य के लिए चिंतित थी।

यह कहानी ईद के सुबह से शूरू होती है। हामिद अपने गांव के दोस्तों के साथ ईदगाह के लिए निकला था। हामिद अपने दोस्तों से बहुत गरीब था, और उसके पास ईदी के रूप में केवल तीन पैसे थे। दूसरे लड़के सवारी, मिठाई और खूबसूरत मिट्टी के खिलैने पर अपने जेब से पैसा खर्च कर रहे थे। और जब हामिद इस क्षणिक आनंद के लिए पैसा उड़ाने से मना किया तब वे उसे चिढाने लगे। जब उसके दोस्त अपने आप में आनंद उठा रहे थे, हमीद अपने प्रलोभन पर काबू पा रहा था, तब उसको याद आया कि कैसे उसकी दादी की उंगलियाँ रोटी बनाने के समय जल जाती थी। इसलिए वह एक लोहे की दुकान में गया और एक चिमटा खरिद लिया। जब वे सब गांव को लौटे, तो हामिद के दोस्त हामिद की खरीदारी केलिए उसे चिढाने लगे और कहने लगे की हमारे खिलौने तुम्हारे चिमटे से ज्यादा अच्छे हैं। उसके बाद हामिद नाना प्रकार के तर्क - वितर्क के साथ उन्हें करारा जवाब देता है और उसके दोस्त उस चिमटे के प्रति आकृष्ट तथा मोहित हो गये। और उस चिमटे के बदले अपने खिलौने उसे देने के लिए तैयार हो गए थे, जिसे हामिद ने लेने से इनकार कर दिया।

यह कहानी एक मार्मिक संदेश से खतम होती है, जब हामिद उसकी दादी को वह चिमटा देता है, वह उसको गाली देती है और कहती है कि चिमटा खरीदने की बजाय तुम मेले में कुछ खा-पी लेते। पर जब हामिद ने यह कहा कि रोज आपकी ऊंगलियाँ रोटियाँ पकाते हुये जल जाती हैं, इसीलिये तो वह चिमटा लाया है, जिससे उँगलियाँ ना जले। यह सुनते ही वह आसूं से फूट पड़ी और उसे आशिर्वाद दिया।

कीर्तिपर्णा, +3 द्वितीय वर्ष

आपकी बात

आदर पूर्वक अभिवादन। हिन्दी भारती का वर्तमान अंक देखा-पढ़ा, बेहद अच्छा लगा। नागार्जुन पर आलेख प्रशंसनीय है। संक्रांति सम्बन्धित जानकारी ज्ञानवर्धक है। रमजान लेख "सर्वधर्म समभाव" को चित्रित करता है। जगन्नाथ यात्रा की जानकारी अभूतपूर्व और संग्रहणीय है। सम्पादकीय तो पत्रिका की आत्मा समान है। सम्पादन परिवार, रचनाकार तथा महाविद्यालय हिन्दी विभाग साधुवाद के पात्र हैं। हिन्दी के प्रति आपका समर्पण और जिजीविषा स्तुत्य एवं वंदनीय है। हिन्दी सेवा की जो मशाल आपने प्रज्वलित की हुई है, ईश्वर उसे सदा प्रकाशित रखे। मेरी आत्मीय शुभकामनाएँ।

डॉ. नरेश मोहन
हिन्दी सेवक, बीएचईएल हरिद्वार, उत्तराखंड

मुझे पिंकी दीदी की कहानी 'तूफान' बहुत अच्छी लगी। प्रज्ञा का लेख 'मिथुन संक्रांति' भी बहुत अच्छा लगया। उसको पढ़ कर मुझे पता चला कि रज पर्व कैसे मानते हैं। ऐसे ही सब लेख भेजते रहें और हमारे हिंदी विभाग को ऐसे ही आगे बढ़ाते रहें। ऐसे ही हमारे हिंदी विभाग का विकास होता रहे। मैं बहुत खुश हूं जो मैं एक हिंदी की छात्रा हूँ।

हफ़िज़ा बेगम, +3 तृतीय वर्ष

प्रेमचंद

https://youtu.be/9Gma0h5oSoE

ठाकुर का कुआँ

https://youtu.be/suXv-eV6I5M

यादों के गलियारों से

कलम शृंखला के अंतर्गत प्रसिद्ध पत्रकार विजय श्री त्रिवेदी जी के साथ विभाग

हिंदी फिल्म आर्टिकल 15 के लेखक गौरव सोलंकी तथा ओड़िया फिल्म जगत के विख्यात कलाकार अनु चौधरी तथा पार्थसारथी जी के साथ विभाग की छात्रायें

धन्यवाद